तुलसी प्रज्ञा

JOURNAL OF THE JAIN VISHVA BHARATI

खण्ड-६ अक्टूबर १९८० अंक ७

वर्द्धमान ग्रन्थागार
जैन विश्व भारती, लाडनूं

जैन विश्व भारती
लाडनूं (राजस्थान)

सम्मतियाँ

जैन विश्व भारती ग्रंथालय में शोधार्थियों के लिए विश्व-स्तरीय संदर्भ सामग्री मौजूद है। प्राच्य संदर्भ से लेकर गांधी तक और उसके बाद आचार्य तुलसी तक भारतीय दर्शन विकास का अध्ययन हो सकता है। वातावरण सहज ही अध्ययन का है। इच्छा होती है कुछ दिन जम कर अध्ययन करूँ।

दिनांक १९।९।८०

- नंदकिशोर नौटियाल
संपादक, 'हिन्दी ब्लिट्ज'
बम्बई-१

× × × × ×

जैन विश्व भारती ग्रंथागार में प्राच्य विद्या, दर्शन व साहित्य की विविध उपलब्ध सामग्री को देखकर यही आकांक्षा तथा प्रेरणा हुई कि जीवन में ऐसा सुयोग प्राप्त हो कि इस अपूर्व ग्रंथसागर में एक डुबकी ही लगा सकें।

दिनांक १९।९।८०

—प्रो० राजम् नटराजन्
हिन्दी विभाग, एस० आई० ई० एस० कालेज,
सायन, बंबई-२२

× × × × ×

जैन विश्व भारती ग्रंथगार में जो ग्रंथ-संग्रह उपलब्ध है, वह एक संदर्भ ग्रंथालय के रूप में उपयोग हो सकेगा, इतना महत्त्वपूर्ण है।

दिनांक १९।९।८०

—नरेन्द्र पाटिल
६ अ, कामगार नगर, कुर्ला पूर्व
मुंबई—२४

तुलसीप्रज्ञा

सम्पादक
डॉ० नथमल टाटिया

सह-सम्पादक
डॉ० कमलेशकुमार जैन

प्रबन्ध-सम्पादक
गोपीचन्द चोपड़ा

जैन विश्व भारती, लाडनूं

जैन विश्व भारती
लाडनूं (राजस्थान)

तुलसीप्रज्ञा

खण्ड ६ अक्टूबर, १९८० अंक ७

अनुक्रमणिका

पृष्ठ सं०

१. वचन-वीथी ३
☐आगम वचन

२. आचार्य प्रवचन : समझौतावादी बनें ५
☐युगप्रधान आचार्य श्री तुलसी
☐संकलनकर्त्ता-मुनि धर्मरुचि

३. श्रीमज्जयाचार्य रचित 'झाणी चरचा' ७
☐सम्पा०-अनु० मुनि नवरत्नमल

४. इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों से : मुनिश्री खेतसी जी (सतयुगी) ९
☐मुनि नवरत्नमल

५. तीर्थंकर-चरित विषयक संस्कृत-साहित्य १५
☐जयकुमार जैन

६. सारङ्गकवि विरचित 'सुभाषित बत्तीसी' के सम्बन्ध में और नई सामग्री २५
☐भंवरलाल नाहटा

८. जैन विश्व भारती : समाचार-दर्शन २९

वार्षिक मूल्य : रु० २५.०० एक अङ्क का मूल्य : रु० २.५०

नोट—यह आवश्यक नहीं है कि इस अङ्क में प्रकाशित लेखों में उल्लिखित विचार सम्पादक अथवा संस्था को मान्य हों।

वचन वीथी

तिण्हं दुप्पडियारं समणाउसो ! तं जहा — अम्मापिउणो, भट्टिस्स धम्मायरियस्स ।

१. संपातोवि य णं केइ पुरिसे अम्मापियरं सयपागसहस्सपागेहिं तेल्लेहिं अब्भंगेत्ता, सुरभिणा गंधट्टएणं उव्वट्टित्ता, तिहिं उदगेहिं मज्जावेत्ता, सव्वालंकार-विभूसियं करेत्ता, मणुण्णं थालीपागसुद्धं अट्ठारसवंजणाउलं भोयणं भोयावेत्ता जावज्जीवं पिट्ठिवडेंसियाए परिवहेज्जा, तेणावि तस्स अम्मापिउस्स दुप्पडियारं भवइ । अहे णं से तं अम्मापियरं केवलिपण्णत्ते धम्मे आघवइत्ता पण्णवइत्ता परूवइत्ता ठावइता भवति, तेणामेव तस्स अम्मापिउस्स सुप्पडियारं भवति समणाउसो !

२. केइ महच्चे दरिद्दं समुक्कसेज्जा । तए णं से दरिद्दे समुक्किट्ठे समाणे पच्छा पुरं चणं विउलभोगसमितिसमण्णागते यावि विहरेज्जा । तए णं से महच्चे अण्णया कयाइ दरिद्दीहूए समाणे तस्स दरिद्दस्स अंतिए हव्वमागच्छेज्जा । तए णं से दरिद्दे तस्स भट्टिस्स सव्वस्समवि दलयमाणे तेणावि तस्स दुप्पडियारं भवति । अहे णं से तं भट्टिं केवलिपण्णत्ते धम्मे आघवइत्ता पण्णवइत्ता परूवइत्ता ठावइता भवति, तेणामेव तस्स भट्टिस्स सुप्पडियारं भवति [समणाउसो] ? ।

भगवान् ने कहा—आयुष्मान श्रमणो ! तीन पद दुष्प्रतिकार हैं—उनसे ऊर्ऋण होना दुःशक्य है—१. माता-पिता, २. भर्ता पालन-पोषण करने वाला, ३. धर्माचार्य ।

१. कोई पुत्र अपने माता-पिता का प्रातःकाल में शतपाक सहस्रपाक तेलों से मर्दनकर, सुगन्धित चूर्ण से उबटन कर, गंधोदक, शीतोदक तथा उष्णोदक से स्नान करवाकर सर्वालङ्कारों से उन्हें विभूषित कर, अठारह प्रकार के स्थालीपाक-शुद्ध व्यञ्जनों से युक्त भोजन करवाकर, जीवन-पर्यन्त कांवर (बहंगी) में उनका परिवहन करे तो भी वह उनके उपकारों से ऊर्ऋण नहीं हो सकता। वह उनसे तभी ऊर्ऋण हो सकता है, जब कि उन्हें समझा-बुझाकर, प्रबुद्धकर, विस्तार से बताकर केवलीप्रज्ञप्त धर्म में स्थापित करता है।

२. कोई अर्थपति किसी दरिद्र का धन आदि से समुत्कर्ष करता है। संयोगवश कुछ समय बाद या शीघ्र ही वह दरिद्र विपुल भोग-सामग्री से युक्त हो जाता है और वह अर्थपति किसी समय दरिद्र होकर सहयोग की कामना से उसके पास आता है। उस समय वह भूतपूर्व दरिद्र अपने स्वामी को सब कुछ अर्पण करके भी उसके उपकारों से ऊर्ऋण नहीं हो सकता। वह उससे तभी ऊर्ऋण हो सकता है, जबकि उसे समझा-बुझाकर, प्रबुद्धकर विस्तार से बताकर केवलीप्रज्ञप्त धर्म में स्थापित करता है।

३. केति तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चाणिसम्म कालमासे कालं किच्चा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववण्णे। तए णं से देवे तं धम्मायरियं दुब्भिक्खाओ वा देसाओ सुभिक्खं देसं साहरेज्जा, कंताराओ वा णिक्कंतारं करेज्जा, दीहकालिएणं वा रोगातंकेणं अभिभूतं समाणं विमोएज्जा, तेणावि तस्स धम्मायरियस्स दुप्पडियारं भवति। अहे णं से तं धम्मायरियं केवलिपण्णत्ताओ धम्माओ भट्ठं समाणं भुज्जोवि केवलिपण्णत्ते धम्मे आववइत्ता पण्णवइत्ता परूवइत्ता ठावइता भवति, तेणामेव तस्स धम्मायरियस्स सुप्पडियारं भवति [समणाउसो !?]।

३. कोई व्यक्ति तथारूप श्रमण-माहन के पास एक भी आर्य तथा धार्मिक वचन सुनकर अवधारण कर, मृत्युकाल में मर कर किसी देवलोकमें देवरूप में उत्पन्न होता है। किसी समय वह धर्माचार्य को अकालग्रस्त देश से सुभिक्ष देश में संहृत कर देता है, जंगल से बस्ती में ले आता है या लम्बी बीमारी तथा आतंक (सद्योघाती रोग) से अभिभूत बने हुए को विमुक्त कर देता है, तो भी वह धर्माचार्य के उपकार से उऋण नहीं हो सकता। वह उससे तभी ऊर्ऋण हो सकता है जबकि कदाचित् उसके केवलीप्रज्ञप्त धर्म से भ्रष्ट हो जाने पर उसे समझा-बुझा कर, प्रबुद्धकर, विस्तार से बताकर पुनः केवलीप्रज्ञप्त धर्म में स्थापित कर देता है।

—ठाणं ३, सूत्र ८७

—०—

चरित्तसंपन्नयाए णं भन्ते ! जीवे किं जणयइ ?

चरित्तसंपन्नयाए णं सेलेसीभावं जणयइ। 'सेलेसिं पडिवन्ने य अणगारे चत्तारि केवलिकम्मंसे खवेइ। तओ पच्छा सिज्झइ बुज्झइ मुच्चइ परिनिव्वाएइ सव्वदुक्खाणमन्तं करेइ'॥

— उत्तरज्झयणाणि, २९/६१

समझौतावादी बनें

बन्धुओ और बहनो !

मानव-मानस की यह बड़ी विचित्र स्थिति है कि वह एक क्षण में प्रसन्न और एक क्षण में अप्रसन्न हो जाता है। अनुकूलता में प्रसन्नता आकाश को छूने लगती है तो प्रतिकूलता में अप्रसन्नता पाताल को छू लेती है। मैं इस प्रसन्नता और अप्रसन्नता में अधिक तथ्य नहीं देखता। अनुकूलता और प्रतिकूलता में थोड़ा अन्तर तो साधारण व्यक्ति के लिये सम्भाव्य है, पर आकाश-पाताल का अन्तर कभी भी उचित नहीं। सबसे ऊँचा तत्त्व है—समता। आचारांङ्ग-सूत्र में कहा गया है - "समया धम्म मुदाहरे मुणी"-अर्थात् भगवान् महावीर ने समता में धर्म कहा है। सचमुच ही जैन साधना पद्धति का आधार समता ही है। इस तथ्य का जितना अधिक विकास हमारे जीवन में होता है उतना ही हम वीतरागता के नजदीक जाते हैं।

मुनि की परिभाषा करते हुये भगवद् गीता में कहा है—

"दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।
वीतारागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते॥"

अर्थात् जो दुःखों में उद्विग्न नहीं होता, सुखों के प्रति जिसकी आकांक्षा नहीं है, राग, भय और क्रोध जिसके विनष्ट हो गये हैं तथा जिसकी बुद्धि स्थिर हो गई है, वही वास्तव में मुनि है। तब प्रश्न होगा कि क्या उपर्युक्त प्रकार का भी आदमी हो सकता है? मैं मानता हूं कि यदि ऐसा नहीं हो सकता है तो फिर यह सिद्धान्त सर्वथा गलत है। सिद्धान्त वही ठीक है जो जीवन-व्यवहार में उतर सके। पर आप इस सिद्धान्त को जीवन में नहीं उतार सकते, इसका अर्थ यह नहीं कि कोई भी व्यक्ति इस सिद्धान्त को जीवनगत नहीं बना सकता। असंख्य-असंख्य साधक इस सिद्धान्त को व्यवहार बनाकर सिद्ध, बुद्ध और मुक्त बने हैं।

आप यह कह सकते हैं कि यह सिद्धान्त तो साधकों के लिये है, हम गृहस्थों के लिए इसकी क्या उपयोगिता है? मैं नहीं समझता, यह सिद्धान्त किसके लिये उपयोगी नहीं है। क्या आप लोग सुख और शान्ति नहीं चाहते? यदि सुख और शान्ति की अपेक्षा है तो इस सिद्धान्त को किसी न किसी सीमा तक स्वीकार करना ही होगा। हमारा जीवन अनुकूल-

* आचार्यश्री तुलसी के ११ सितम्बर १९७७ को जैन विश्व भारती, लाडनूं के प्रवचनसे।

ताओं और प्रतिकूलताओं का संगम है। इस स्थिति में यदि व्यक्तिगत समता के सिद्धान्त को नहीं अपनाता है तो वह कभी सुख से नहीं जी सकता। अतः उचित यही है कि व्यक्ति हर स्थिति को समता पूर्वक सहन कर ले। मैं अपनी त्रेसठ वर्ष की उम्र में यही समझ पाया हूं कि व्यक्ति को समझौतावादी बनना चाहिए। जो भी अनुकूल या प्रतिकूल परिस्थिति हमारे सामने है, उसके साथ हम अपना सामञ्जस्य बैठाने का प्रयत्न करें।

किसी को स्वास्थ्य की प्रतिकूलता है, किसी को अर्थाभाव है, किसी का पति अनुकूल नहीं है तो किसी की पत्नी अनुकूल नहीं है। अतः यदि व्यक्ति इन स्थितियों से समझौता नहीं करे तो उसका जीना दूभर हो जायेगा। पर यह कहना जितना सरल है, उतना करना सरल नहीं है। आदमी विवशता से सब सहन कर लेता है, पर विवेक पूर्वक परिस्थितियों से समझौता नहीं कर पाता। यदि विवेकपूर्वक परिस्थितियों से समझौता करना सीख जाए तो प्रतिकूल से प्रतिकूल परिस्थिति को भी व्यक्ति हँसते-हँसते पार कर लेता है।

गृहस्थ संत तुकाराम बहुत ही ऊँचे साधक थे। एक बार खेत से ईखों का गट्ठर लेकर घर आ रहे थे। बच्चे पीछे हो गए और ईख माँगने लगे। तुकाराम ने ना कहना सीखा ही नहीं था। अतः बच्चों को ईख बाँटते रहे। घर पहुंचे तो एक ईख शेष रहा। उसे लाकर पत्नी के हाथों में दिया। पत्नी ने पूछा—"खेत से एक ही ईख लाए?"

तुकाराम ने कहा—"नहीं! लाया तो काफी था पर रास्ते में बच्चे माँगने लगे। अतः बाँटते-बाँटते अन्त में एक ही अवशिष्ट रहा।"

यह सुनते ही पत्नी को इतना क्रोध आया कि उसने वह ईख पति के सिर पर दे मारा। सिर से टकरा कर ईख के दो टुकड़े हो गए। इस हालत में भी तुकाराम समता से विचलित नहीं हुए और उन्होंने हँसते हुए पत्नी से कहा—तुम कितनी अच्छी हो? ईख एक और खाने वाले दो, अतः तुमने दो टुकड़े कर दिये।

बन्धुओ! आप देखें, ऐसे उग्र स्वभाव वाली पत्नी के साथ भी तुकाराम समझौता कर चलते रहे और अपने आपको कभी अशान्त नहीं बनाया। ऐसे और भी अनेक उदाहरण प्राप्त हो सकते हैं। अपेक्षा है ऐसे उदाहरणों से प्रेरणा लेने की और अपने जीवन को समता के साँचे में ढालने की। अभ्यास से कोई भी कार्य असाध्य नहीं रहता। हम भी इस दिशा में सतत अभ्यासरत रहें तो वह दिन दूर नहीं जब हमारा जीवन समतामय बन जायेगा।

[संकलनकर्त्ता—मुनिश्री धर्मरुचि]

—०—

श्रीमज्जयाचार्य रचित 'झीणी चरचा'

(मूल एवं हिन्दी अनुवाद)

सम्पा० एवं अनु०—मुनि नवरत्नमल

(गताङ्क से आगे)

ढाल—९

२५-२८ कुण कुण भावे वरतै आत्मा, द्रव्य परिणामीक भावै जी।
कषाय आत्मा दोय भाव वरतै, उदै परिणामीक आवै जी॥
जोग आत्मा त्रिहूं भावे वरतै, उपशम वरजी नामी जी।
उपयोग आत्मा त्रिहूं भाव वरतै, खायक खयोपशम परिणामी जी॥
ज्ञान आत्मा त्रिहूं भावे वरतै, खायक खयोपशम परिणामी जी।
दर्शण आत्मा पांच भाव में, वरतै सही सुधामी जी॥
उदै वरजी ने च्यार भाव में, चारित्र आत्मा वरतै जी।
खायक ने खयोपशम भाव में, वीर्य शक्ति प्रवरतै जी॥

आठ आत्माएं, पांच भावों में से कौन-कौन से भाव में परिणमन करती हैं?

द्रव्य-आत्मा एक—पारिणामिक भाव में, कषाय आत्मा दो—औदयिक और पारिणामिक भावों में, योग आत्मा उपशम को छोड़कर चार—औदयिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक भावों में, उपयोग और ज्ञान आत्मा तीन—क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक भावों में, चारित्र-आत्मा औदयिक भाव को छोड़कर चार—औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक भावों में और वीर्य आत्मा तीन—क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक भावों में परिणमन करता है।

२९. उदै भाव छै किती आत्मा, दर्शण जोग कषायो जी।
ताकी पांच आत्मा छै ते, उदै भाव नहीं थायो जी॥

औदयिक भाव कितनी आत्माएं हैं?

दर्शन, योग और कषाय तीन आत्माएं औदयिक भाव हैं। शेष पांच—द्रव्य, उपयोग, ज्ञान, चारित्र और वीर्य आत्माएं औदयिक भाव नहीं हैं।

३०. उपशम भाव छै किती आत्मा, दर्शण चारित्र दोयो जी।
अपर अनेरी षट् आत्मा ते, उपशम भाव न होयो जी॥

औपशमिक भाव कितनी आत्माएं हैं?

दर्शन और चरित्र दो आत्माएं औपशमिक भाव हैं। शेष छह— द्रव्य, योग, उपयोग ज्ञान, चारित्र और वीर्य औपशमिक भाव नहीं हैं।

३१-३२. खायक भाव छै किती आत्मा, आत्मा षट् पिछांणो जी।
द्रव्य आत्मा ने कषाय आत्मा, खायक भाव म जांणो जी॥
खयोपशम भाव छै किती आत्मा, आत्मा षट् पिछांणो जी।
द्रव्य आत्मा ने कषाय आत्मा,खयोपशम भाव म जांणो जी॥

क्षायिक और क्षायोपशमिक भाव कितनी आत्माएं हैं?

योग, उपयोग, ज्ञान, दर्शन, चारित्र और वीर्य—ये छह आत्माएं क्षायिक और क्षायोपशमिक भाव हैं। द्रव्य और कषाय ये दो आत्माएं क्षायिक और क्षायोपशमिक भाव नहीं है।

३३. परिणामीक भाव छै किती आत्मा, आठूंई अवधारो जी।
परिणामीक विना नहीं कोई, जीव अजीव प्रकारो जी॥

पारिणामिक भाव कितनी आत्माएं हैं?

आठों ही आत्माएं पारिणामिक भाव हैं पारिणामिक भाव के बिना कोई भी जीव और अजीव पदार्थ नहीं हैं।

३४. उदे भाव पावै छै तिण में, आत्मा केती पावै जी।
आठ आत्मा श्री जिन भाखी, जुवा जुवा गुण भावै जी॥

जिन प्राणियों में औदयिक भाव पाया जाता है, उनमें कितनी आत्माएं पाई जाती हैं?

जिन भगवान् ने उनमें आठों ही आत्माएं कही हैं, उनके गुण अलग-अलग जान लेने चाहिए।

३५. उपशम भाव वाला में आठूं, इमहिज खायक भावो जी।
खयोशप ने परिणामीक में, इमहिज आठ सुन्यावो जी॥

इसी तरह औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक भाव वाले प्राणियों में आठों ही आत्माएं जान लेनी चाहिए।

३६-३७ वंदनीक छै किती आत्मा, चारित्र एक गिणायो जी।
निंदनीक छै किती आत्मा, दर्शण जोग कषायो जी॥
गुण ग्राम किती आत्मा ना करणा, षट आत्मा न करणा जी।
द्रव्य कषाय ना गुण नहीं करना, निपुण विचारै निरणा जी॥

आठ आत्माओं में वंदनीय, निंदनीय और गुणगान करने योग्य कितनी आत्माएं हैं?

एक चरित्र आत्मा वंदनीय है। दर्शन (मिथ्यात्व की अपेक्षा से), योग (असत्प्रवृत्ति की अपेक्षा से), उपयोग, दर्शन (सम्यग् दृष्टि की अपेक्षा से) चारित्र और वीर्य ये आत्माएं गुणगान करने योग्य हैं। द्रव्य और कषाय ये आत्माएं गुणगान करने योग्य नहीं हैं।

—०—

२२ मुनिश्री खेतसी जी (सतयुगी)

(संयम-पर्याय सं० १८३८-१८८०)

□ मुनि नवरत्नमल

(गताङ्क से आगे)

गीतक-छन्द

देह चिन्ता के लिए बहुधा उठे गुरु रात में।
सुबह पूछा खेतसी ने सहज चलती बात में।
काम ज्यादा पड़ा कल क्यों? जगाने के त्याग हैं।
आज मेरे शयन के ही त्याग अयि महाभाग! हैं[१९]॥ ३२॥

दोहा

वापस लाऊँ मैं उसे, लें जो गण में नाथ!
कदम उठाये जो उधर, हम न तुम्हारे साथ[२०]॥ ३३॥
वंकचूलिया सूत्र था, टीकम डोसी पास।
प्रतिलिपि की मुनिवर्य नें, देख उचित अवकाश[२१]॥ ३४॥

[लय—भीखणजी स्वामी रो शासन…]

भिक्षु साथ ही रहे, अलग चौमासी एक बिताई जी।
वैणी मुनि वैराग्य-लता में की सींचाई जी[२२]॥ ३५॥
अन्तर भक्ति शक्ति से गुरु की सेवा सतत बजाई जी।
आर्य भिक्षु ने अनशन में गुण गाथा गाई जी[२३]॥ ३६॥
थे आचार-विचार-कुशल अति श्रम से बुद्धि बढ़ाई जी।
सूक्ष्म-सूक्ष्म आगम चर्चा में पटुता पाई जी॥ ३७॥

दोहा

प्रश्नों का उत्तर सरल, सरस युक्ति संपन्न।
देते थे सुन श्रोतृगण, होते परम प्रसन्न[२४]॥ ३८॥
गति-विधि कल्पाकल्प की, बहुत जानते आप।
और धारणा थी विविध, परम्परा की साफ[२५]॥ ३९॥
स्वामीजी के बाद में, की अष्टादश वर्ष।
सेवा भारीमाल की, रखा वही आदर्श[२६]॥ ४०॥

[लय—भीखणणी स्वामी रो शासन···]

देख योग्यता भारी गुरु ने दी युवपद की साईं जी।
लिखे नाम दो सुगुरु विनय से पर्वत राई जी ॥ ४१ ॥

एक म्यान में दो तलवारें सुन परिषद् चकराई जी।
एक नाम रखते हित जय ने विनति सुनाई जी ॥ ४२ ॥

दोहा

हेम खेतसी ने यही, अनुनय किया निकाम।
हो प्रसन्न गुरुवर्य ने, रखा एक ही नाम[२७] ॥ ४३ ॥

[लय—भीखणजी स्वामी रो शासन···]

नाम नहीं रखने से उनकी रोनक नहीं घटाई जी।
आत्मार्थी थे नहीं नाम हित मूंड मुंडाई जी ॥ ४४ ॥

निस्पृह वर गंभीर धीर की गुण गरिमा लहराई जी।
गण-स्तंभ गण-वत्सल की महिमा महकाई जी[२८] ॥ ४५ ॥

दोहा

करते ऊहापोह जन, होकर मन में भ्रांत।
उत्तर सुन गुरुवर्य का, सभी हो गये शांत[२९] ॥ ४६ ॥

सुनते—देंगे आपको, युवाचार्य पद आर्य !।
रायचंदजी को दिया, (यह) किया किस तरह कार्य ॥ ४७ ॥

प्रश्न अकेले का नहीं, जन-जन मुख पर बात।
दे दूंगा मैं ही उन्हें, उत्तर हाथोहाथ[३०] ॥ ४८ ॥

---

१९ एक बार स्वामीजी के कुछ शारीरिक अस्वस्थता चल रही थी। रात के समय उन्हें बार-बार लघुशंका के लिए उठाना पड़ा और मुनि खेतसीजी को अनेक बार जगाया। मुनि खेतसीजी प्रत्येक बार परठने के लिए गये। दूसरे दिन मुनि खेतसी ने सहज भाव से स्वामीजी से पूछा—'कल रात्रि में आपको लघुशंका के लिए बहुत उठना पड़ा।'

स्वामीजी ने उनके उस साधारण कथन को कुछ अधिक गहरा ले लिया। उन्हें लगा कि इसे रात को बहुत बार जगाना पड़ा था, इसीलिए यह कह रहा है। उन्होंने कहा—"हां, रात को मुझे तो तकलीफ थी ही, पर साथ-साथ तुम्हें भी बार-बार उठाने से तकलीफ हुई। आज रात को भी पता नहीं कि कैसी स्थिति रहे? परन्तु आज रात को तुझे जगाने का त्याग है।"

स्वामीजी के इस अप्रत्याशित निर्णय ने मुनि खेतसी जी को एकदम चकित कर दिया। वे कहने लगे—"यह आपने क्या किया? मैंने अपने जागरण के कष्ट से घबराकर

आप से यह निवेदन थोड़े ही किया था? खैर! आपको जगाने का त्याग है तो मुझे आज रात में सोने का ही त्याग है।" वे सारी रात जागकर स्वामीजी की सेवा करते रहे।

(अनुश्रुति के आधार से)

२०. सिंघजी गुजराती साधु थे। कालान्तर में वे स्वामीजी के शिष्य बन गये। कुछ दिन तो वे ठीक ढंग मे चलते रहे, परन्तु बाद में मर्यादाओं की अवहेलना करने लगे। स्वामीजी ने कई बार उन्हें समझाया, परवे अपनी गलतियां दूर नहीं कर सके। तब स्वामी जी ने उन्हें सिरियारी में गण से पृथक् कर दिया। वे वहां से 'माँडा' चले गये।

मुनि खेतसीजी ने स्वामीजी से कहा—'आप प्रायश्चित्त देकर पुनः संघ में लें तो मैं उन्हें वापस ले आऊं?' स्वामीजी ने कहा—'वह फिर से संघ में लेने योग्य नहीं है।'

मुनि खेतसी ने स्वामीजी की इस बात पर विशेष ध्यान नहीं दिया और अपने ही उत्साह में उन्हें ले आने को तैयार हो गये।

स्वामीजी ने तब 'एक घाव दो टूक' करते हुए कहा—'यदि तूने उनके साथ आहार का सम्बन्ध जोड़ लिया तो हमें तेरे साथ आहार करने का त्याग है।'

स्वामीजी के वचन सुनकर मुनि श्री खेतसी के पैर वहीं रुक गये।

(भिक्षु दृष्टान्त, १६६)

२१. सं० १८५९ में मांडवी बंदर (कच्छ देश) से टीकम डोसी स्वामीजी के दर्शन करने तथा अपनी शंकाओं का निराकरण करने के लिए आये। उस समय वंकचूलिया सूत्र की प्रति उनके पास थी। मुनिश्री खेतसी ने उस प्रति से दूसरी प्रति लिखी।

(श्रुतानुश्रुत)

२२. सं० १८४४ में मुनि श्री खेतसीजी ने वैणीरामजी को प्रतिबोध देने के लिए बगड़ी चातुर्मास किया। इसके अतिरिक्त सं० १८३९ से १८६० तक के चातुर्मास स्वामी जी के साथ किए।[१८]

२३. स्वामीजी ने अन्तिम समय में मुनि खेतसीजी की मुक्तस्वर से प्रशंसा करते हुए फरमाया—'मैंने सतयुगी के सहयोग से सुखपूर्वक संयम पालन किया एवं परम समाधि का अनुभव किया[१९]।'

---

(१८) भीक्खू ऋष भेला किया, सर्व चोमासा सार।
एक चौमासो न्यारो कीयो, जांणी लाभ अपार ॥
वैणीरामजी रै वासतै, स्वाम खेतसी सोय।
चौमासो बगड़ी कीयो, चमालिसै अवलोय ॥
चौमासो ऊतरीयां पछै, भीक्खू ऋष रै पास।
पाली में संजम लीयो, वैणीरामजी तास ॥

(सतजुगी चरित्र, ढा० १०, दोहा १ से ३)

(१९) सिरियारी में भीक्खू स्वामी, साठै कीयो संथारो।
कह्यो सतजुगी ना साझ थकी म्है, पाम्यो संजम भारो।
इण विधि भीक्खू आप प्रसंस्या, इसा खेतसी स्वामी ॥
गणवच्छल गणनायक गिरवा, सतजुगी अंतरजामी ॥

(सतजुगी चरित्र, ढाल ९, गा० ११, १२)

२४. मुनि श्री खेतसीजी प्रश्नों का उत्तर बड़ी कुशलता से देते थे। उनके कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

(१) किसी व्यक्ति ने मुनिश्री से पूछा—'शुभ योगों की प्रवृत्ति में पहले पुण्य का बंध होता है या निर्जरा का ?'

मुनिश्री ने उससे पूछा—पहले पत्ते होते हैं या धान्य ?

उसने कहा—पहले पत्ते होते है, फिर धान्य।

मुनिश्री ने कहा—इसी प्रकार शुभ योगों की प्रवृत्ति से पहले समय में पुण्य का बंध होता है। उस समय अशुभ कर्म चलित तो होते हैं, पर झगड़ते दूसरे समय में हैं। **भगवती-सूत्र** के प्रथम शतक में कर्मों के चलित होने का तथा उनके निर्जरण का समय अलग-अलग बतलाया है। अतः पहले पुण्य का बंध होता है और बाद में निर्जरा का।

(हेम दृष्टान्त, २५)

(२) किसी ने पूछा—शुभ-योगों को आस्रव कहा जाता है या निर्जरा भी ?

मुनिश्री बोले—शुभ योगों को आस्रव भी कहा जाता है और निर्जरा भी।

उसने कहा—शुभ योग वस्तुतः एक है, फिर उसे आस्रव और निर्जरा दो कैसे कहा जाता है ?

मुनिश्री दृष्टान्त देते हुए बोले—जिस प्रकार एक मनुष्य को अपने पुत्र की अपेक्षा से बाप और अपने बाप की अपेक्षा से पुत्र कहा जाता है, उसी प्रकार शुभ-योगों से पुण्य का बंध होता है, इसलिए उन्हें आस्रव तथा अशुभ कर्म झड़ते हैं, इसलिए उन्हें निर्जरा कहा जाता है। **उत्तराध्ययन-सूत्र** अध्ययन ३४ में तेजो, पद्म तथा शुक्ल इन तीन लेश्याओं को धर्मलेश्या कहा गया है तथा छहों लेश्याओं को कर्मलेश्या भी कहा गया है। तेजो, पद्म और शुक्ल इन तीन लेश्याओं से पुण्य का बंध होता है, इस दृष्टि से उन्हें कर्मलेश्या कहा गया है तथा इन तीनों से अशुभ-कर्म झड़ते हैं, इस अपेक्षा से उन्हें धर्मलेश्या भी कहा जाता है। धर्मलेश्या का अर्थ निर्जरा और कर्मलेश्या का अर्थ आस्रव है। इसलिए शुभ-योगों को अपेक्षा-भेद से आस्रव और निर्जरा दोनों कहा जाता है। **(हेम दृष्टान्त, २६)**

(३) किसी ने पूछा—**भगवती सूत्र** का वाचन तथा रामचरित्र का व्याख्यान दोनों को आप बराबर कैसे कहते हैं ? मुनिश्री ने इसका स्पष्टीकरण करते हुए कहा—साधु निरवद्य भाषा बोलते हैं, सावद्य बोलने का उन्हें परित्याग है, इस दृष्टि से दोनों का वाचन समान है। **नंदी सूत्र** में सम्यग्-दृष्टि की मति को मतिज्ञान कहा गया है। **(हेम दृष्टान्त, २७)**

२५. सं० १८६६ में मुनि श्री हेमराजजी का चातुर्मास पाली था। अस्वस्थ होने से चातुर्मास के बाद मुनिश्री का विहार नहीं हो सका। उस समय आचार्य भारीमाल जी मुनि खेतसीजी आदि अनेक साधुओं और हीरांजी आदि अनेक साध्वियों के साथ पाली पधारे। एक महीना पूरा होने लगा तब लोगों ने कहा—आप तो अब विहार कर जायेंगे। मुनि खेतसी बोले—इस समय हमारे पर महीने का नियम लागू नहीं होता। मुनि हेमराज जी की अस्वस्थता के कारण अधिक रहना भी कल्पता है। हमारा हेमराजजी के विहार के बाद ही विहार करने का विचार है। बाद में मुनि हेमराजजी स्वस्थ होकर विहार कर

'हेमावास' पहुंच गये तब भारीमालजी स्वामी, खेतसी स्वामी आदि ने वहाँ से रोयट की तरफ विहार कर दिया।

मुनिश्री खेतसी ने यह स्पष्ट कर दिया कि एक साधु अस्वस्थ हो तो दूसरे साधु कम या अधिक रहें तो कल्प का उल्लंघन नहीं होता। **(हेम दृष्टान्त, ३४)**

२६. मुनिश्री खेतसीजी ने उत्तराधिकारी श्री भारीमालजी की भी तन-मन से १८ वर्ष (सं० १८६० से १८७८) तक सेवा की[२०]।

२७. आचार्य श्री भारमालजी ने अपनी वृद्धावस्था के समय सं० १८७७ वैसाख कृष्णा ९ गुरुवार को भावी आचार्य का चुनाव करते हुए युवाचार्य-पत्र लिखा। उसमें उन्होंने दो नाम लिखे:— प्रथम नाम मुनि खेतसीजी का था और द्वितीय नाम मुनि रायचन्द जी का—

"सर्व साध-साधवी खेतसीजी तथा रायचन्दजी री आगन्या मांहे चालणो।"

इस प्रकार युवाचार्य पत्र में मुनि खेतसीजी के नाम का उल्लेख होने से स्पष्ट हो जाता है कि आचार्य श्री भारीमाल जी के दिल में उनके प्रति कितना गहरा स्थान था और मुनिश्री खेतसीजी का कितना महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व था।

मुनि खेतसीजी का व्यक्तित्व जितना ऊँचा था, उतना ही निर्लिप्त भी था, पद-आकांक्षा उन्हें छू तक नहीं पाई थी। पत्र में उल्लिखित वह नाम उल्टा उनके लिए एक समस्या बन गया। उन्होंने अपनी ओर से आचार्य भारीमालजी से प्रार्थना की कि आप मुनि रायचन्दजी को ही आचार्य पद पर नियुक्त करें[२१]।

इस प्रसंग पर सतरह वर्षीय मुनि श्री जीतमलजी (जयाचार्य) ने आचार्य श्री भारीमालजी को किसी एक नाम रखने के लिए निवेदन किया। आचार्य प्रवर ने कहा—'ये दोनों परस्पर मामा-भानजा ही हैं, अतः दो नाम रहने पर भी कोई अड़चन नहीं।' मुनि श्री जीतमलजी ने पुनः एक नाम रखने के लिए ही प्रार्थना की, तब गुरुदेव ने युवाचार्य

(२०) साठा थी अठंतरा लगै, विचर्‌या भारीमाल।
सेव खेतसी साचवी, आणी भाव रसाल॥
वरस अठारै आसरै, भारीमालजी जोय।
तन मन सूं सेवा करी, स्वाम खेतसी सोय॥

(सतजुगी चरित्र, ढा० १० दो० ४, ५)

भीखू रिष नी भलीप रै, इमहिज भारीमाल।
खेतसीजी व्यावच करी, सुविनीतां ए चाल॥

(भारीमाल चरित्र, ढा० १३, दो० ३)

(२१) सतजुगी हेम वयण वदीजै रे, रायचन्दजी नै पट दीजै रे।
म्हारी तरफ सूं चिन्ता न कीजै रे॥
भारीमाल सुणी मन हरख्या रे, निकलंक दोनूं ई नै निरख्या रे।
यांनै परम विनैवंत परख्या रे॥
एहवा उभय बड़ा मुनि धीरा रे, गण-स्थंभण गेहर गंभीरा रे।
हद विमल अमोलक हीरा रे॥

(ऋषिराय सुजश, ढा० ७, गा० ४ से ६)

पत्र में एक मुनि श्री रायचन्दजी का ही नाम रखा।

उक्त विवरण आचार्य श्री भारीमालजी तथा रायचन्दजी के प्रकरण में विस्तार पूर्वक दिया गया है।

२८. मुनिश्री खेतसीजी इतने निस्पृह थे कि उन्हें न तो युवाचार्य पत्र में नाम लिखे जाने का गर्व था और न हटाये जाने का विषाद। वे जैसे पहले थे वैसे ही बाद में। संभव है कि नाम हटाये जाने पर उन्होंने अपने को कुछ भार-मुक्त ही समझा हो। उनकी महत्ता के विषय में जयाचार्य ने बड़े मार्मिक शब्दों में उल्लेख किया है[२२]।

२९. युवाचार्य पद पर मुनिश्री रायचन्दजी को नियुक्त कर देने के पश्चात् भी मुनि श्री खेतसीजी के नाम का प्रश्न अनेक गांवों के लोगों में ऊहापोह का विषय बन गया। उक्त प्रश्न का समाधान पाने के लिए लोगों ने चित्तौड़ निवासी हंसराजजी संचेती को अग्रणी बनाया। उन्होंने खेतसीजी स्वामी के सम्मुख भारीमालजी स्वामी से पूछा—"हम सुनते थे कि मुनि खेतसीजी को युवाचार्य पद दिया जायेगा, परन्तु आपने मामा को छोड़कर भानजे को कैसे चुना?"

भारीमालजी स्वामी ने उनकी अनधिकार चेष्टा को अपनी झिड़की के द्वारा रोकते हुए कहा—"तुम गृहस्थों को इस बात में पड़ने की क्या आवश्यकता है? साधुओं की बात साधु जानते हैं। ये तो खेतसी और हेमजी ठहरे, परन्तु तुम गृहस्थ लोग तो ऐसे हो कि परस्पर में दरार डलवा सकते हो। युवाचार्य पद की व्यवस्था करने का काम मेरा है, तुम्हारा नहीं।"

आचार्य प्रवर के उन उपालम्भ भरे शब्दों को सुनकर वे चुप हो गये।

(प्रकीर्णक, पत्र २७)

३०. ऋषिराय के पदासीन होने के पश्चात् देवगढ़ निवासी रतनजी नामक व्यक्ति ने मुनि श्री खेतसीजी से कहा—'हम सुनते थे कि युवाचार्य पद आपको देंगे और दिया रायचन्दजी को, यह कहां तक उचित हुआ?'

उसने इसके आगे फिर कहा कि— यह प्रश्न मेरे अकेले का नहीं है। बहुत लोग इस विषय में पूछते हैं, उन्हें क्या उत्तर देना चाहिए?

मुनिश्री ने फरमाया—'थे मैने भलाय दीजो' अर्थात् जो लोग पूछें उन्हें मेरे से पूछने का कह देना। मैं उन्हें जवाब दे दूंगा।

(प्रकीर्णक, पत्र सं० २७)

(२२) विनयवंत मुनि सतजुगी सरिखा, पंचम काल मझारी।
वलि व्हैणा महा दुर्लभ जाणो, उत्तम पुरुष अवतारी रा॥
विनयवंत सुध प्रकृति विवेकी, सकल संघ हितकारी।
काम पड्यां याद आवै खेतसी, गणवच्छल गणधारी रा॥
सतजुगी आप बड़ा उपकारी……।

(सतयुगी चरित्र, ढा० १३, गा० ८, १०)

—०—

तीर्थंकर-चरित विषयक संस्कृत-साहित्य

□डॉ० जयकुमार जैन*

भारतीय संस्कृति के सर्वोत्तम वाहन के रूप में संस्कृत भाषा का अद्वितीय महत्त्व सर्वत्र स्वीकृत है। भारत की यह संस्कृति अनादिकाल से अनन्त प्रकार के सम्प्रदायों की स्वतन्त्र देन से समृद्ध होती रही है। अतः संस्कृत-साहित्य का विशाल भण्डार प्राचीनकाल के तीन प्रमुख सम्प्रदायों— वैदिक या हिन्दू, जैन और बौद्ध के मनीषियों की सेवा से समृद्ध हुआ है। इसलिए भारतीय संस्कृति के वास्तविक एवं सर्वांग मूल्यांकन के लिए तीनों धाराओं से समाहृत साहित्य का विवेचन अपरिहार्य है।

एक विशिष्ट भारतीय सम्प्रदाय के रूप में जैनों ने संस्कृत की जो महत्त्वपूर्ण सेवा की है, इस विषय में ऐतिहासिक विद्वान् एम० विन्टरनित्ज का कथन स्मरणीय है—

"मैं जैनों की साहित्यिक उपलब्धियों को पूर्ण न्याय देने में असमर्थ था। किन्तु मैं आश्वस्त हूं कि जैनों ने प्राचीनकाल के धार्मिक, नैतिक तथा वैज्ञानिक साहित्य के क्षेत्र में जो पूर्ण सहयोग दिया है, उसको मैंने प्रदर्शित किया है।"[१]

विद्वान् समीक्षक की इस उक्ति से स्पष्ट है कि संस्कृत साहित्य के क्षेत्र में जैनों की देन का पूर्णांग आकलन करना आवश्यक है और आज तक यह कार्य वांछित रूप में नहीं हुआ। संस्कृत साहित्य में जैन कवियों का योग विशेष महत्त्व रखता है, क्योंकि ये कवि प्राकृत की परम्परा को साथ लेकर संस्कृत-साहित्य के क्षेत्र में प्रविष्ट हुए और इस प्रकार पालि की परंपरा के वाहक बौद्धों के अनुरूप संस्कृत साहित्य की अभिवृद्धि में सहायक बने। अतः इनकी देन गंभीर विश्लेषण और अध्ययन के योग्य है। भाषा और भाव, प्रयोग-वैचित्र्य तथा आलंकारिक सिद्धान्तों की संभावित नयी परीक्षा—इन सभी क्षेत्रों में इन कवियों से वे नये तत्त्व प्राप्त होते हैं, जिनके विवेचन के बिना संस्कृत साहित्य का पूर्ण परिचय असंभव है।

*संस्कृत-प्रवक्ता, सनातन धर्म पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, मुजफ्फरनगर (उ० प्र०)

1. "I was not able to do full justice to the literary achievements of the Jains. But I hope to have shown that the Jains have contributed their full share to the religious, ethical and scientific literature of ancient India."

—The Jainas in the *History of Sanskrit literature*, P.5.

साम्प्रदायिक भेदबुद्धि के कारण संस्कृत साहित्य का यह विशाल अंश आज भी उपेक्षित पड़ा है। अतः तीर्थंकरों के चरित विषयक संस्कृत साहित्य का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करना अपेक्षित प्रतीत होता है।

संस्कृत साहित्य में जैन चरितकाव्यों की एक लम्बी शृंखला है। इन चरित-काव्यों में प्रायः तिरसठ शलाकापुरुषों का चरित वर्णित है। चौबीस तीर्थंकर, नौ नारायण, नौ प्रतिनारायण, नौ बलभद्र और बारह चक्रवर्ती—इन तिरसठ पुरुषों को जैन-साहित्य में शलाका संज्ञा से अभिहित किया गया है। शलाका शब्द की व्याख्या प्रस्तुत करते हुये श्री रंजन सूरिदेव ने लिखा है कि—"शलाका शब्द का अर्थ नाप या प्रमाणबोधक वस्तु है। प्राचीनकाल में चुनाव के समय शलाका का व्यवहार किया जाता था। यहाँ शलाका-पुरुष से ऐसे महत्त्वशाली गणमान्य व्यक्तियों का ग्रहण किया गया है जो समाज में गणनीय थे। जिनका अस्तित्व समाज के लिए आवश्यक माना जाता था, जिन व्यक्तियों के व्यक्तित्व के आधार पर समाज का मूल्यांकन किया जाता था, ऐसे व्यक्तियों को जैन-वाङ्मय में शलाका पुरुष कहा गया है।"[२]

तिरसठ शलाका पुरुषों में चौबीस तीर्थंकरों का महत्त्व सर्वाधिक है। चौबीस तीर्थंकरों के नाम क्रमशः इस प्रकार हैं—ऋषभ, अजित, संभव, अभिनन्दन, सुमति, पद्म-प्रभ, सुपार्श्व, चन्द्रप्रभ, पुष्पदंत, शीतल, श्रेयान्स, वासुपूज्य, विमल, अनन्त, धर्म, शांति, कुन्थु, अर, मल्लि, मुनिसुव्रत, नमि, नेमि, पार्श्व और वर्द्धमान।[३]

सम्प्रति संस्कृत तीर्थंकरचरितों का कालानुक्रमिक संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है—

१. चन्द्रप्रभचरितम् (वीरनन्दी)

यह चरित ग्रन्थ जैन काव्यों में सर्वोत्कृष्ट महाकाव्य है। इसमें १८ सर्ग और १६९७ पद्य हैं। इस काव्य में अष्टम तीर्थंकर चन्द्रप्रभ का चरित निबद्ध है। इसकी एक विशेषता है कि इसके सभी सर्गों के अन्तिम पद्यों में "उदय" शब्द आया है, अतः यह काव्य "उदयांक" कहलाता है।

इसके रचयिता वीरनन्दी नंदिसंघ के देशीगण के आचार्य थे। इनके गुरु का नाम अभयनंदि और दादागुरु का नाम गुणनंदि था। इनका समय ईस्वी सन् की दसवीं शती मान्य है, क्योंकि महाकवि वादिराज ने १०२५ ई० में रचित **पार्श्वनाथचरित** में इनका स्मरण किया है।[४]

२. वर्द्धमानचरितम् (असग)

इसका अपर नाम महावीर चरित या सन्मति चरित भी है। इसमें अन्तिम तीर्थंकर वर्द्धमान का चरित वर्णित है। कथानक गुणभद्र के **उत्तरपुराण** के ७४वें पर्व से लिया

२. गुरु गोपालदास वरैया स्मृतिग्रन्थ, पृ० ५७२ "जैन वाङ्मय में शलाकापुरुष" लेख।

३. द्र०-तिलोयपण्णत्ती, गाथा ५१२-५१४, पृ० २०६.

४. चन्द्रप्रभामिसंबंद्धा रसपुष्टां मनःप्रियाम्।
कुमुद्वतीव नो धत्ते भारती वीरनंदिनः॥ पार्श्वनाथचरित १/३०

गया जान पड़ता है। अवान्तर कथानक भी पर्याप्त आये हैं। **वर्धमान-चरित** पर पूर्ववर्ती कवियों का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। किरातार्जुनीयम् आदि प्रमुख ग्रन्थों की शैली पर यह ग्रन्थ लिखा गया है।

इसके रचयिता महाकवि असग हैं। इनके पिता का नाम पटुमति था और माता नाम वैरेति। गुरु नागनंदि थे, जो व्याकरण, काव्य और जैन शास्त्रों के ज्ञाता थे।[५] इनका समय भी ईसा की दसवीं शताब्दी मान्य है।[६]

३. शांतिनाथचरितम् (असग)

इसमें तीर्थंकर शांतिनाथ का वर्णन है। पौराणिकता का समावेश अधिक है। यह सौलह सर्गात्मक महाकाव्य है। यह भी महाकवि असग की ही रचना है।

४. नेमिनिर्वाणकाव्यम् (वाग्भट)

इस काव्य में २२वें तीर्थंकर नेमिनाथ का चरित्र पन्द्रह सर्गों में वर्णित है। अनेक अप्रचलित छन्दों का प्रयोग इसमें किया गया है। काव्य शान्त रसात्मक है।

वाग्भट पौरवाड़ (प्राग्वाट) कुल के थे। इनके पिता का नाम छाहड़ था तथा इनका जन्म अहिच्छत्रपुर में हुआ था।[७] प्रकृत वाग्भट **वाग्भटालंकार** के रचयिता वाग्भट से भिन्न और उनसे पूर्ववर्ती हैं। **वाग्भटालंकार** में **नेमिनिर्माण काव्य** के अनेक पद्य उद्धृत किये गये हैं।[८] इनका समय ईस्वी सन् की दसवीं शती है।[९] डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्री ने वाग्भट का समय ई० सन् १०७५-११२५ माना है,[१०] जो चिन्त्य है, क्योंकि **वाग्भटालंकार** में एक पद्य में जयसिंह महाराज का नामकीर्तन है।[११] अतः **वाग्भटालंकार** के रचयिता वाग्भट से महाराज जयसिंह और ये वाग्भट दोनों ही पूर्ववर्ती और संभवतः समकालीन हैं। १०२५ ई० में रचित **पार्श्वनाथचरित** की रचना वादिराज ने जयसिंह की ही राज-धानी में उन्हीं के समय में की थी। अतः वाग्भट का समय इसके बाद तो किसी भी स्थिति में संभव नहीं है।

५. पार्श्वनाथचरितम् (वादिराजसूरि)

पार्श्वनाथचरित १२ सर्गात्मक उत्तम कोटि का महाकाव्य है। इसमें तेईसवें तीर्थंकर पार्श्व का नव पूर्व भवों सहित वर्णन किया गया है। इस पर शुभचन्द्र द्वारा पंजिका लिखे जाने का उल्लेख मिलता है,[१२] पर उपलब्ध नहीं होती।

५. विशेष परिचय के लिए द्र०—वर्द्धमानचरित-प्रशस्तिपद्य (सूरत प्रका०)

६. द्र०-जैन साहित्य का बृहद् इतिहास भाग-६, पृ० १२६

७. अहिच्छत्रपुरोत्पन्नप्राग्वाटकुलशालिनः।
छाहडस्य सुतश्चक्रे प्रबंधं वाग्भटः कविः॥
जैन साहित्य का बृहद् इतिहास, भाग-६, पृष्ठ ४८० से उद्धृत।

८. द्र०-वाग्भटालंकार ४/३२, ३४, ३९ एवं नेमिनिर्वाण काव्य ६/५१,४६,४७।

९. द्र०-जैन साहित्य का बृहद् इतिहास, भाग ६, पृ० ४८१।

१०. संस्कृत काव्य के विकास में जैन कवियों का योगदान, पृ० २८३।

११. द्र०-वाग्भटालंकार ४/४५।

१२. जिनरत्नकोश, पृ० २४६।

वादिराज सूरि मतिसागर के शिष्य और श्रीपालदेव के प्रशिष्य थे। इनका समय ११वीं शती का प्रथम चरण है। १०२५ में इन्होंने **पार्श्वनाथचरित** की रचना की थी।[१३]

६. धर्मनाथचरितम् (नेमिचन्द्र)

इसमें १५वें तीर्थंकर धर्म का चरित वर्णित है। संभवतः इसके रचयिता वही नेमिचन्द्र हैं, जिन्होंने वि० सं० १२१३ (११५६ ई०) में प्राकृत भाषा में **"अनन्तनाहचरियं"** की रचना की थी।[१४]

७. मुनिसुव्रतचरितम् (मुनिरत्नसूरि)

इस काव्य में २०वें तीर्थंकर मुनि सुव्रत का चरित वर्णित है। इसमें अनेक सूरियों की चरित-गाथा भी निबद्ध है।[१५]

मुनिरत्नसूरि चन्द्रगच्छीय चन्द्रप्रभसूरि के प्रशिष्य तथा धर्मघोषसूरि के शिष्य थे।[१६] इनकी दूसरी कृति **असगस्वामिचरित** वि० सं० १२५२ (ई० ११९५) भी उपलब्ध है।[१७] अतः ये ईसा की १२वीं शती के विद्वान् सिद्ध हैं।

८. पार्श्वनाथचरितम् (माणिक्यचन्द्र सूरि)

यह ग्रन्थ अप्रकाशित है। इसकी रचना वि० सं० १२७६ (११२९ ई०) में राजगच्छीय नेमिचन्द्र के प्रशिष्य और सागरचन्द्र के शिष्य माणिक्यचन्द्र सूरि ने की थी।[१८]

९. धर्मशर्माभ्युदयम् (हरिचन्द्र)

इस काव्य में १५वें तीर्थंकर धर्मनाथ के कथानक को महाकाव्य का कलेवर प्रदान कर २१ सर्गों में प्रौढ़ तथा सुन्दर वर्णन किया गया है।

हरिचन्द्र जाति के कायस्थ थे। इनकी मां का नाम रथ्या तथा पिता का नाम आर्द्रदेव और भाई का नाम लक्ष्मण था।[१९] पं० अमृतलाल शास्त्री वाराणसी ने विभिन्न प्रमाणों के आधार पर इनका समय १२०० ई० से १२३० ई० तक माना है।[२०]

१०. चतुर्विंशतिजिनेन्द्रसंक्षिप्तचरितम् (अमरसूरि)

इसमें २४ अध्यायों में चौबीसों तीर्थंकरों का संक्षिप्त चरित वर्णित है। इसके रचयिता **बालभारत** के प्रणेता के रूप में प्रसिद्ध अमरसूरि हैं, जो वायडगच्छीय जिनदत्तसूरि के शिष्य थे। इस ग्रन्थ की रचना १३वीं शताब्दी के प्रारंभ में १२३८ ई० के पूर्व ही की गई।[२१]

---

१६. जैन साहित्य का बृहद् इतिहास, भाग-६, पृ० १२७।
१७. वही, पृ० १२७।
१८. जिनरत्नकोश, पृ० २२४।
१९. द्र०-धर्मशर्माभ्युदय, प्रशस्तिपद्य २-५।
२०. जैन संदेश, शोधांक ७, पृ० २५१-५४ पर "महाकवि हरिचन्द्र" लेख।
२१. द्र०-भारतीय संस्कृति में जैनधर्म का योगदान, पृ० १६८-६९।

११. वासुपूज्यचरितम् (वर्द्धमानसूरि)

यह काव्य केवल चार सर्गों में विभक्त होने पर भी परिमाण में काफी विशाल है। संस्कृत साहित्य में वासुपूज्य तीर्थंकर के जीवन चरित पर एक मात्र यही काव्य उपलब्ध है।

ग्रन्थप्रशस्ति के अनुसार कवि वर्द्धमानसूरि, विजयसिंह सूरि के शिष्य तथा नागेन्द्रगच्छीय थे। इसकी रचना उन्होंने सं० १२९९ (१२४२ ई०) में अणहिल्लपुर में की थी।[२२]

१२. मुनिसुव्रतचरितम् (अर्हद्दास)

यह काव्य १० सर्गों में विभक्त है। कथानक गुणभद्राचार्य के **उत्तरपुराण** से लिया गया है।

अर्हद्दास **सागारधर्मामृत** और **अनगारधर्मामृत** के रचयिता पं० आशाधर जी के समकालीन थे। मुनिसुव्रतचरित के कुछ पद्यों में उल्लिखित है कि उन्होंने आशाधर जी की उक्तियों से सन्मार्ग पाया था।[२३] श्री फड़कुले जी ने अर्हद्दास का समय १२४३ ई० माना है।[२४]

१३. शान्तिनाथचरितम् (अजितप्रभसूरि)

इस काव्य में ६ सर्ग हैं तथा इसमें तीर्थंकर शांतिनाथ का चरित निबद्ध है।

अजितप्रभसूरि पूर्णिमागच्छीय वीरभद्रसूरि के शिष्य थे। उन्होंने इस काव्य की रचना वि० सं० १३०७ (ई० १२५०) में की थी।[२५]

१४. पार्श्वनाथचरितम् (विनयचन्द्र सूरि)

तेरहवीं शताब्दी में विनयचन्द्रसूरि ने अनुष्टुप् छन्दों में **पार्श्वनाथचरित** की रचना की। डा० गुलाबचन्द चौधरी ने इनका समय १२२९-१२८८ ई० माना है।[२६]

१५. मल्लिनाथचरितम् (विनयचन्द्रसूरि)

इसमें तीर्थंकर मल्लि का चरित निबद्ध है। यह भी **पार्श्वनाथचरित** के रचयिता विनयचन्द्रसूरि की कृति है।

१६. पार्श्वनाथचरितम् (सर्वानन्दसूरि)

पार्श्वनाथचरित पञ्च सर्गात्मक काव्य है। इसके रचयिता सर्वानन्दसूरि सुधर्मागच्छीयशीलभद्रसूरि के प्रशिष्य और गुणरत्नसूरि के शिष्य थे। इन्होंने **पार्श्वनाथचरित** की रचना १२३४ ई० में की थी।[२७]

---

२२. द्र०-वासुपूज्यचरित, प्रशस्ति पद्य २८-३१।
२३. द्र०-मुनिसुव्रतचरित १/६४-६५।
२४. द्र०-पुरुदेवचम्पू (बम्बई प्रका०) की भूमिका।
२५. जिनरत्नकोश, पृ० ३१२।
२६. जैन साहित्य का बृहद् इतिहास, भाग-६, पृ० १२१।
२७. जिनरत्नकोश, पृ० २४५।

१७. **चन्द्रप्रभचरितम्** (सर्वानन्दसूरि)

सर्वानन्दसूरि ने ही १२४५ ई० में त्रयोदश सर्गात्मक **चन्द्रप्रभचरित** महाकाव्य की रचना की।[२८]

१८. **शांतिनाथचरितम्** (मुनिदेवसूरि)

यह सप्तसर्गात्मक काव्य है। इसमें अलौकिक घटनाओं का समावेश हुआ है। इसकी भाषा सरल और प्रसादगुण सम्पन्न है।

मुनिदेवसूरि बृहद्गच्छीय मदनचन्द्रसूरि के शिष्य थे। इसकी रचना वि० सं० १३२२ (१२६५ ई०) में हुई थी।[२९]

१९. **श्रेयान्सनाथचरितम्** (मानतुंगसूरि)

यह तीर्थंकर श्रेयान्सनाथ का जीवनचरितात्मक १३ सर्गों में विभक्त महाकाव्य है। इसमें सर्गों का नामकरण विषयवस्तु के आधार पर किया गया है। ग्रन्थ का रचना-काल १३३२ वि० सं० (१२७५ ई०) है।[३०]

२०. **शान्तिनाथचरितम्** (रामचन्द्र मुमुक्षु)

"पुण्यास्रव कथाकोश" के रचयिता के रूप में विख्यात रामचन्द्र मुमुक्षु ने १३वीं शताब्दी में ही **शांतिनाथचरित** की रचना की।[३१]

२१. **नेमिचरितम्** (विक्रम)

यह ग्रन्थ निर्णयसागर काव्यमाला से तथा दि० जैन प्र० कोटा और बाद में इन्दौर से वि० सं० २००५ में नेमिदूत नाम से प्रकाशित हुआ है। किन्तु इसका वास्तविक नाम **नेमिचरित** है। इसकी रचना सांगण के पुत्र विक्रम ने की थी। इसका उल्लेख कवि ने स्वयं निम्न पद्य में किया है—

> **"श्रीमन्नेमेः चरितविशदं सांगणस्यांगजन्मा।**
> **चक्रे काव्यं बुधजनमनःप्रीतये विक्रमाख्यः॥"**[३२]

२२. **संभवनाथचरितम्** (मेरुतुंगसूरि)

तीसरे तीर्थंकर संभवनाथ पर वि० सं० १३१३ (१३५६ ई०) में मेरुतुंगसूरि ने **संभवनाथचरितम्** की रचना की थी।[३३]

२३. **महापुरुषचरितम्** (मेरुतुंग सूरि)

मेरुतुंगसूरि ने ही पांच सर्गात्मक **महापुरुषचरित** की रचना की। इसमें आदिनाथ, शांति, नेमि, पार्श्व और वर्द्धमान इन पांच—तीर्थंकरों का चरित निबद्ध है।

---

२८. जैन साहित्य का बृहद् इतिहास, भाग-६, पृ० ८८।

२९. जिनरत्नकोश, पृ० ३७९।

३०. जिनरत्नकोश, पृ० ४००। विस्तृत वर्णन के लिए द्र०-"तेरहवीं चौदहवीं शताब्दी के जैन संस्कृत महाकाव्य"—श्यामशंकर दीक्षित।

३१. तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा, भाग-४, पृ० ७१।

३२. नेमिदूत, पद्य १२६(इन्दौर प्रकाशन)।

३३. जिनरत्नकोश, पृ० ४२२।

२४. **शांतिनाथचरितम्** (मुनिभद्रसूरि)

इसका कथानक मुनिदेवसूरि के शांतिनाथचरित से प्रभावित जान पड़ता है, किन्तु काव्यतत्त्वों की दृष्टि से यह उससे उत्कृष्ट है। ग्रन्थ प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि मुनिभद्र-सूरि, गुणभद्रसूरि के शिष्य थे। **शांतिनाथचरित** की रचना उन्होंने वि० सं० १४१० (ई० सन् १३५३) में की थी।[३४]

२५. **पार्श्वनाथचरितम्** (भावदेवसूरि)

चौदहवीं शताब्दी के मध्य में भावदेव सूरि ने वि० सं० १४१२ (ई० १३५५) में **पार्श्वनाथचरित** की रचना की। श्री हरगोविन्ददास बेचरदास ने प्रशस्ति के **"रविविश्ववर्षे"** का अर्थ १३१२ किया है,[३५] जो उचित नहीं जान पड़ता, क्योंकि रवि=१२ और विश्व =१४ मानने से १४१२ ही उचित है।

२६. **नेमिनाथचरितम्** (कीर्तिराज उपाध्याय)

यह द्वादश सर्गात्मक काव्य है। इसकी रचना श्री कीर्तिराज उपाध्याय ने वि० सं० १४१५ (१३५८ ई०)में की थी।[३६] कथावस्तु के अनुसार सर्गों का नामकरण किया गया है।

२७. **वर्द्धमानचरितम्** (पद्मनन्दि भट्टारक)

इसमें करीब ३०० पद्यों में तीर्थंकर वर्द्धमान का चरित निबद्ध है। पद्मनंदि भट्टारक प्रभाचन्द्र के शिष्य थे। एक शिलालेख के अनुसार पद्मनंदि भट्टारक ने १३९३ ई० में मूर्तिप्रतिष्ठा कराई थी।[३७]

संभवतः यह उनका अंतिम समय रहा होगा। डा० नेमिचन्द्र शास्त्री ने इनका समय ईसा की चौदहवीं शताब्दी माना है।[३८]

२८. **शांतिनाथचरितम्** (भ० सकलकीर्ति)

यह सोलह अधिकारों में विभक्त है। काव्य में पौराणिकता अधिक है। विपुल काव्य निर्माण की दृष्टि से भ० सकलकीर्ति अत्यन्त प्रसिद्ध विद्वान् हैं। इनके पिता का नाम कर्म-सिंह और माता का नाम शोभा था। ये हूंवड़ जाति के थे और अणहिलपुर पट्टन के निवासी थे। बलात्कार गण ईडर शाखा के ये प्रथम भट्टारक थे।[३९] प्रो० जोहरापुरकर ने इनका समय १३९३-१४५३ ई० माना है।[४०]

---

३४. शांतिनाथचरित (बनारस), प्रशस्ति पद्य १७।

३५. द्र०-पार्श्वनाथचरित (य० ग्र० बनारस) की प्रस्तावना।

३६. नेमिनाथचरित, १२/५३।

३७. भट्टारक सम्प्रदाय, लेखांक २३९, पृ० २३६।

३८. तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परंपरा, भाग-३, पृ० ३२३।

३९. भट्टारक सम्प्रदाय, बलात्कारगण ईडर शाखा कालपट, पृ० १५८।

४०. वही, पृ० १५८।

२९. वर्द्धमानचरितम् (भ० सकलकीर्ति)

यह उन्नीस परिच्छेदों में विभक्त महाकाव्य है। इसमें धार्मिक तथा दार्शनिक विषयों का समावेश है। इसके प्रणेता भी भ० सकलकीर्ति हैं।

३०. **मल्लिनाथचरित** (भ० सकलकीर्ति)

भ० सकलकीर्ति का ही सातसर्गात्मक **मल्लिनाथचरित** भी है। इसमें ग्राम, नगर आदि का रमणीय वर्णन हुआ है।

३१. **विमलनाथचरितम्** (ज्ञानसागर)

विमल तीर्थंकर के विषय में रचित यह प्रथम संस्कृत काव्य है। इसमें पांच सर्ग हैं तथा यह गद्यात्मक है। ज्ञानसागर बृहत्तपागच्छ के रत्नसिंह सूरि के शिष्य थे तथा इन्होंने वि० सं० १५१७ (ई० १४६०) में **विमलनायचरित** की रचना की थी।[४१]

३२. **शांतिनाथचरितम्** (भावचन्द्रसूरि)

यह काव्य अद्यावधि अप्रकाशित है। इसकी पाण्डुलिपि लालबाग बम्बई के एक भण्डार में होने का उल्लेख मिलता है।[४२] यह छह प्रस्तावों में विभक्त गद्यात्मक काव्य है। इसमें तीर्थंकर शांतिनाथ के बारह भवों का वर्णन है।

भावचन्द्रसूरि पूर्णिमा गच्छ के पार्श्वचन्द्रसूरि के प्रशिष्य और जयचन्द्रसूरि के शिष्य थे। इन्होंने **शांतिनाथचरित** की रचना वि० सं० १५३५ (१४७८ ई०) में की थी।[४३]

३३. **चन्द्रप्रभचरितम्** (भ० शुभचन्द्र)

चन्द्रप्रभचरित में आठ सर्ग हैं। इसमें तीर्थंकर चन्द्रप्रभ का चरित निबद्ध है। प्रो० विद्याधर जोहरापुरकर ने इनका भट्टारककाल वि० सं० १५७३-१६१३ (१५१६-१५५६ई०) माना है।[४४] किन्तु डा० नेमिचन्द्र शास्त्री इनका भट्टारककाल वि० सं० १५३५-१६२०(ई० १४७८-१५६३) मानते हैं।[४५] इस प्रकार वे ईसा की सोलहवीं शती के प्रारंभ के विद्वान् हैं।

३४. **पार्श्वनाथचरितम्** (हेमचन्द्रविजयगणि)

ई० सन् १५७५ में हेमविजयगणि ने **पार्श्वनाथचरित** का प्रणयन किया। ग्रन्थ-प्रणयन का काल कवि ने स्वयं प्रशस्ति में उल्लिखित किया है।[४६] सर्गान्त पुष्पिका से ज्ञात होता है कि हेमविजयगणि, कमलविजयगणि के शिष्य थे। ये कमलविजयगणि तपागच्छीय हीरविजयसूरि और विजयसेनसूरि की परंपरा के थे।[४७] यह **पार्श्वनाथचरित** छह सर्गों में विभक्त है तथा इसमें ३०३६+१६ प्रशस्तिपद्य= ३०५२ पद्य हैं।

४१. जिनरत्नकोश, पृ० ३५८।
४२. जैन साहित्य का बृहद् इतिहास, भाग-६, पृ० ११०।
४३. जिनरत्नकोश, पृ० ३७९।
४४. भट्टारक सम्प्रदाय, बलात्कारगण ईडरशाखा कालपट, पृ० १२८।
४५. तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परंपरा, भाग-३, पृ० ३६४।
४६. द्र०-पार्श्वनाथचरित—हेमविजयगणि (बम्बई) प्रशस्तिपद्य, १४-१५।
४७. द्र०-वही, सर्गान्त पुष्पिका।

३५. **पार्श्वनाथचरितम्** (पद्मसुन्दरगणि)

यह सप्त-सर्गात्मक काव्य है। पद्मसुन्दरगणि आनन्दमेरु के शिष्य और पद्ममेरु के प्रशिष्य थे। इन्होंने **रायमल्लाभ्युदय** की रचना वि० सं० १६१५ में (१५५८ ई०) की थी। अतः ये १६वीं ई० शती के विद्वान् ठहरते हैं।

३६. **पार्श्वनाथचरितम्** (उदयवीरगणि)

यह काव्य आठ सर्गों में विभक्त है। इसमें हेमचन्द्राचार्य के **त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित** की परंपरा के अनुसार गद्य में तीर्थंकर पार्श्वनाथ का चरित वर्णित किया गया है।

उदयवीरगणि तपागच्छीय हेमचन्द्रसूरि के प्रशिष्य और संघवीरगणि के शिष्य थे। अपनी परंपरा का उल्लेख इन्होंने सर्गान्त पुष्पिका में किया है। प्रशस्ति के अनुसार ग्रन्थ का रचनाकाल वि० सं० १६५४ (१५९७ ई०) है।[४८] इसका दूसरा नाम **पार्श्वपुराण** भी है।

३७. **नेमिनाथचरितम्** (गुणविजयगणि)

यह काव्य तेरह सर्गों में विभक्त है। तीर्थंकर नेमिनाथ के पूर्ववर्ती नौ भवों के साथ इसमें जरासंधवध, श्रीकृष्णवृत्तान्त, साम्ब प्रद्युम्नवर्णन, नलदमयन्तीचरित्र आदि विषयों का भी वर्णन हुआ है। गुणविजयगणि के गुरु का नाम कहीं विवेक हर्ष[४९] और कहीं-कहीं विजयसेनसूरि[५०] भी मिलता है। इन्होंने **नेमिनाथचरित** की रचना वि० सं० १६६८ (१६११ ई०) में की थी।[५१]

३८. **शांतिनाथचरितम्** (मेघविजय उपाध्याय)

यह काव्य **नैषधीयचरित** प्रथमसर्ग की समस्यापूर्ति के रूप में लिखा गया है। मेघ-विजय उपाध्याय कृपाविजयगणि और जिनप्रभसूरि के शिष्य थे। ये अकबर के कल्याण-मित्र और हीरविजयसूरि की परंपरा से संबद्ध थे। इनके ग्रन्थों का प्रणयन काल ई० १६५२ से ई० १७०३ तक माना जाता है।[५२]

३९. **वीरोदयकाव्यम्** (आचार्य ज्ञानसागर महाराज—गृहस्थावस्था नाम—भूरामल्ल शास्त्री)

इस काव्य में बाईस सर्ग हैं। प्रारंभ में महावीरकालीन भारत की दुर्दशा का चित्रण है। ११वें सर्ग से महावीर (वर्द्धमान) के पूर्वजों का वर्णन प्रारंभ होता है। अन्त में कवि ने जैनधर्म के उत्तरोत्तर ह्रास पर चिन्ता व्यक्त की है।

४८. "वेदवाणर्तुचन्द्राख्यसंख्ये.....।" पार्श्वपुराण, प्रशस्ति पद्य ९।
४९. जैन साहित्य का बृहद् इतिहास, भाग-६, पृ० ७१।
५०. जिनरत्नकोश, पृ० २१७।
५१. द्र०-जैन साहित्य का बृहद् इतिहास, भाग-६, पृ० ७१।
५२. द्र०-वही, पृ० ७८।

भूरामल्ल शास्त्री ही दीक्षा के बाद ज्ञानसागर महाराज नाम से प्रसिद्ध हुए। आपका जन्म राजस्थान में जयपुर के समीपवर्ती राणोली ग्राम में १८९१ ई० में हुआ।[५३]

४०. **मंगलायतनम्** (बिहारीलाल शर्मा)

मंगलायतनम् में संस्कृत गद्य में तीर्थंकर महावीर का चरित वर्णित है। भाषा की दृष्टि से काव्य बड़ा ही सरस है। यत्र-तत्र **कादम्बरी** की छाया दिखाई पड़ती है, फिर भी मौलिकता की कमी नहीं है। श्री शर्माजी का प्रयास स्तुत्य है। "मंगलायतनम्" के रचयिता इस समय काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के अन्तर्गत रणवीर संस्कृत विद्यालय में साहित्य के प्राध्यापक हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि ई० सन् की दसवीं शताब्दी से लेकर आज तक तीर्थंकरचरितप्रणयन की परंपरा बनी हुई है। इनमें कुछ काव्य— वीरनंदि का **चन्द्रप्रभचरितम्**, वादिराजसूरि का **पार्श्वनाथचरितम्**, हरिचन्द्र का **धर्मशर्माभ्युदयम्** आदि काव्य तो संस्कृत साहित्य के उत्कृष्ट महाकाव्यों की श्रेणी के हैं।

—:o:—

५३. द्र०-सुदर्शनोदयकाव्य में संपादक द्वारा प्रदत्त ज्ञानसागर महाराज का परिचय।

सारंगकवि विरचित 'सुभाषित बत्तीसी' के संबंध में और नई सामग्री

□ भंवरलाल नाहटा*

जैन विश्व भारती, लाडनूं के जर्नल "तुलसी प्रज्ञा,, के खण्ड ५, अंक ७-८ और ९-१० में डॉ०. कमलेशकुमार जैन ने **"सारंग कवि विरचित सुभाषित बत्तीसी"** प्रकाशित की है। प्रस्तुत बत्तीसी में हिन्दी के ३२ दोहों पर संस्कृत में स्वोपज्ञ वृत्ति है, जिसका नाम **'सूक्ति-द्वात्रिंशिका-विवरण'** है और ग्रन्थ संख्या १९८ है। ग्रन्थारंभ में मंगलाचरण स्वरूप सरस्वती वंदन व अंतिम प्रशस्ति स्वरूप गाथा प्राकृत में है अतः इसके कुल छन्दों की संख्या ३४ हो जाती है। विद्वान् संपादक ने एतद् विषयक जानकारी आमंत्रित की है, अतः सारंग कवि और उनकी अन्य कृतियों के संबंध में यहां यथाज्ञात जानकारी दी जा रही है।

सारंगकवि ने स्वयं प्रस्तुत ग्रन्थ में अपने को चन्द्र गच्छ की मड्डाहड़ीय शाखा के वाचक पद्मसुन्दर के शिष्य के रूप में परिचित कराते हुए सं. १६५० के मिति चैत्र शुक्ल त्रयोदशी के दिन जालोर में इसकी रचना गजनी यवनाधीश के राज्यकाल में करने का उल्लेख किया है। कवि ने अपनी अन्य कृति **भोज प्रबंध चौपाई,** जिसकी रचना सं. १६५१ सावन बदि ९ को जालोर में की थी, में माड्डाहड़नगच्छ के तत्कालीन आचार्य ज्ञानसागरसूरि और अपने गुरु पद्मसुन्दर वाचनाचार्य के साथ उनके गुरुभ्राता गोविन्द का भी उल्लेख किया है। सम्पादक महोदय ने प्रशस्ति की व्याख्या में रचना स्थान श्री स्वर्णगिर जावालपुरवरे को जावालपुरवार लिखा है। वास्तव में प्राचीन लिपि में पड़ी मात्रा होने से **"वरे"** को **"वार"** पढ़ लिया है एवं **"मड्डाहड़ीय"** गच्छ को **"मम्माहड़ीय"** पढ़कर निबंध के प्रारभिक वक्तव्य में उन्हें "मम्माहड़ीय" शाखा वाला सूचित किया है। वस्तुतः "मड्डाहड़ीय" गच्छ प्रसिद्ध है और इसके अनेक शिलालेख भी इतिहास प्रमाण सम्प्राप्त हैं।

मंगलाचरण गाथा के **"सविति"** की व्याख्या को **"सवित्रि"** लिखा है जो **"सवत्ति"** होना चाहिए एवं प्रथम गाथा के **"गरीब निवाज"** की व्याख्या में **"दानोद्धरणदक्षम्,,** लिखा है जो **"दीनोद्धरण"** होना चाहिए। दसवें छन्द में **"पख भख चख रुख"** का **"रु"** छूट गया है जी संशोधनीय है।

सारंगकवि लोक साहित्य और लोकभाषा हिन्दी-राजस्थानी में विशेष रुचि रखते थे, अतः उन्होंने अपनी सभी रचनाएं लोक-भाषा में करते हुए भी संस्कृत के विद्वान् होने

*नाहटों की गवाड़, बीकानेर (राजस्थान)

के नाते कतिपय रचनाओं के संस्कृत विवरण भी प्रस्तुत किये हैं। **भावषट्त्रिंशिका, और सुभाषित बत्तीसी'** स्वोपज्ञ तो हैं ही, पर सुप्रसिद्ध राजस्थानी काव्य **"वेलि कृष्ण रुक्मिणी री"** जो राठौड़ पृथ्वीराज की अमरकृति है—पर भी संस्कृत भाषा में **"सुबोधमंजरी"** नामक टीका रची है। इस **वेलि** पर कई भाषा टीकाएं उपलब्ध हैं। महोपाध्याय समयसुन्दरजी के प्रशिष्य जयकीर्ति ने भी अपनी भाषा टीका में यथा स्मृति **"रवितल पंडितरायी मूल सुगम टीका कठिन, कवि सारंग कहाय,,** शब्दों द्वारा सारंग कवि का उल्लेख किया है।

पाठकों की जानकारी के लिए कवि सारंग की प्राप्त रचनाओं की सूची भी यहां प्रस्तुत की जा रही है।

१. **विल्हण पंचाशिका चौपाई** - गाथा ४१२, जालोर, सं० १६३९ आ० सु० १

२. **मातृका बावनी**, सं० १६४०, पौष वदि १० गुरु।

३. **वीरांगद चौपई**, सं० १६४५ जेठ सुदि ५।

४. **सुभाषित बत्तीसी** (सूक्ति द्वात्रिंशिका) वृत्ति, सं० १६५० चैत्र सुदि १३ जालोर गजनी यवनाधिपराज्ये।

५. **सुदन्त बत्तीसी**- उपर्युक्त वृत्ति की प्रशस्ति में उल्लेख।

६. **भाव षट्त्रिंशिका सटीक**, सं० १६७५, आषाढ़ सुदि ५।

७. **भोज प्रबंध चौपई**- सं० १६५१ सावन बदि ९ जालोर।

८. **वेलि कृष्णरुक्मिणी री- सुबोध मंजरी** टीका—सं० १६७८, पाल्हणपुर फिरोजशाहराज्ये।

यह संस्कृत टीका लाखाचरण के बालावबोध के आधार पर लिखी गई थी। **'वेलि कृष्णरुक्मिणी री राठौड़ पिरथीराज री कही,** ग्रन्थ के परिशिष्ट में प्रकाशित है।

कवि सारंग का विवरण अधिकांश राजस्थान में हुआ प्रतीत होता है। आप का अंतिम ग्रन्थ राजस्थान- गुजरात के सीमावती पाल्हणपुर में रचित है। जालोर के जिस गजनी खान (द्वितीय) के शासनकाल में **'सुभाषित बत्तीसी'** की रचना हुई थी, उसके संबंध में प्राप्त महत्त्वपूर्ण रोचक विवरण यहां दिया जा रहा है।

कवि पुण्य कमल कृत स्तवन व चैत्य परिपाटियां— तीर्थमाला स्तवनों से विदित होता है कि सं० १६५१ में भिन्नमाल में देवल की ईंटें खोदते हुए पार्श्वनाथ भगवान् की एक प्रतिमा, श्रीवीरप्रभु के समवसरण युक्त सुन्दर प्रतिमा एवं शारदा की प्रतिमा आदि आठ मूर्तियां प्रकट हुई। यतः--

ईंट खणतां देवल भणी ए, प्रगट्या श्री पारस।
संवत सोल एकानवे, बहु पूगी आस ॥ ८ ॥
समवसरण श्री वीर नुं ए प्रतिमा सुन्दर सार।
मूरति श्री शारदा तणी ए, आठ मूरत अंबार ॥ ९ ॥

मेहता लक्ष्मण और भावडहरा गच्छ के चतुर्दशी पक्ष के पन्यास आदि यह देखकर अति प्रसन्न हुए। यह प्रतिमा शांतिनाथ जिनालय में लाये और स्नात्र महोत्सव, गीत गान होने लगे।

उस समय जालोर नगर में देशपति गजनी खान राज्य करता था और उसका सेवक भिन्नमाल का शासक था। उसने खान से जाकर कहा—साहब ! पीतल का अद्भुत बुतखाना प्रकट हुआ है, वह आप लाओगे तो बहुत सा द्रव्य देंगे। खान ने यह सुनकर तुरन्त इस प्रतिमा को अपने पास मंगवा लिया और कहने लगा कि आज मुझे बहुत पीतल मिला है, हाथी के लिए घण्टा कराऊंगा। यह बात जब सर्वत्र फैली तो चतुर्विध संघ एकत्र हुआ। महाजनों ने गजनी खान के पास प्रार्थना की और मानपूर्वक जवाब मांगा। उन्होंने कहा—पीतल का घन हमारे पास से लेलो और बुतखाना छोड़ दो। बाबा आदम का यह रूप है, इसके बहुत स्वरूप हैं जिसकी सेवा करनी चाहिए, उसे नष्ट कैसे किया जाए ? सलाम करके आप पार्श्वनाथ को छोड़ दे जिससे सबके मन की आशा पूर्ण होगी। हम आपको चार हजार पीरोजी मुद्रा दे देंगे।

गजनीखान ने उत्तर दिया—लाख रुपये के मामले में इतने से कैसे छोड़ूं ? संघ निराश हो लौट आया, हृदय में अत्यन्त दुःख हुआ। हाय ! यह दुख किससे कहें ? म्लेच्छ से प्रतिमा कैसे लें ? लोगों ने विविध प्रकार के अभिग्रह किए। उस गांव में संघवी वीरचंद नामक अति गुणवान् व्यक्ति रहता था। उसने अभिग्रह किया कि पार्श्वनाथ प्रतिमा छूटने पर उसे पूजकर ही अन्न ग्रहण करूंगा। इस पर नीले घोड़े पर सवार और नीले वस्त्राभूषणधारी पार्श्व (यक्ष) धरणेन्द्र पद्मावती के साथ प्रगट हुए और अभिग्रह-धारी सेठ से कहा-सेठ मेरी बात सुनो, रात-दिन क्यों भूखे मरते हो ? पार्श्वनाथजी की वास्तविक प्रतिमा को तो गजनीखान ने तोड़ डाला है, अब वह किसी प्रकार नहीं आ सकती। तुम व्यर्थ में इतने लंघन क्यों करते हो ? सेठ ने कहा—इस भव में जो नियम लिया है, वही सार है। यदि पार्श्वनाथ भगवान् की प्रतिमा नहीं आवेगी तो मुझे मरना ही श्रेयस्कर है।

सेठ का निश्चल चित्त ज्ञात कर धरणेन्द्र ने जालोर जाकर गजनीखान से कहा—तुम सोये हो तो जागो। जल्दी उठकर मेरे पांव पड़ो और मुझे भिन्नमाल नगर में छोड़ो, अन्यथा तुम्हारे पर काल रुष्ट हुआ समझो। यदि मैं रुष्ट हुआ तो बुरा होगा और तुष्ट हुआ तो अपार ऋद्धि दूंगा एवं शत्रुओं पर विजय कराउंगा।

गजनीखान अहंकार में आकर कहने लगा—अरे बुतखाना ! तू मुझे क्या डराता है ? रुष्ट या तुष्ट होकर मेरा क्या कर सकते हो ? मैं भाग्य-बली हूं। डरने वाले हिन्दू गोबरे ! हम तो खुदा के यार हैं। मुल्क में मुसलमान बड़े हैं और बुतखाने के तो वे काल स्वरूप ही हैं। मेरा कथन सुनो। मैं तुम्हारे टुकड़े-टुकड़े कर डालूंगा और गली-गली में फिराऊंगा। मैं देखूंगा कि तुम तुष्ट होकर मुझे क्या दोगे व रुष्ट होकर क्या ले लोगे ? मेरे सेवक होकर तुम मुझे क्या दोगे ?

गजनीखान ने तत्काल विचार कर सिरोही के चार सुनारों को बुलाया और उन्हें कहा—इसे तोड़कर टुकड़े करो, जिससे बीबी का नवसर हार और घोड़े के गले के लिए घूंघरमाला तैयार करो। सोनी लोग तोड़ने लगे तो भंवरों का गुंजार हुआ और उसी समय बीबी व्याकुल होकर दौड़ने लगी। आसमान में मतवाली काली घटा देखकर खान व्याकुल

हुआ। अरे खान ! तुम प्रभु से विमुख हो क्यों कोपभाजन बनते हो? मैं धरणेन्द्र, पार्श्वनाथ का प्रधान हूं, ध्यान देकर देखो ।

लश्कर में मार पड़ने लगी। हाथी-घोड़ों का संहार होने लगा, स्थान-स्थान पर मनुष्य मरने लगे। बीबी बन्धु पुत्र नजर देखते अकेले जाने लगे। धीरज टूटने लगा। जहां जालोरी संकोसी था, वहाँ वर्षा की बून्द भी न गिरी और तेज धूप तपने लगी। प्रजा त्राहि त्राहि पुकारने लगी—खूनकार ! पार्श्वनाथ मूर्ति को छोड़ो। सब की सार करो। भिन्नमाल के हाकिम-खान ने कहा—मालिक ! इसे मत छोड़ो। इससे बहुत काम निकलेंगे, अधिक धन की मांग करो।

सोये हुए मल्लिक गजनीखान को नीचे गिरा दिया। वह मुख से पार्श्वप्रभु को पुकारने लगा। मूर्ति को छोड़ने पर ही तुम्हें छोड़ूंगा। ध्यानपूर्वक उसे मार्मिक प्रहार से मारा। शरीर में घोर वेदना हुई। अन्न जल के प्रति अरुचि हो गई। निद्रा दूर चली गई। मरणान्त समय आया देख गजनीखान ने सोचा—पार्श्वनाथ मान चाहते हैं। उसने कहा—प्रभु ! मुझे जीवन दानदो। यदि रात्रि में मेरी वेदना शान्त हो गई तो प्रातःकाल होते ही आपको छोड़ दूंगा। खान के ऐसा कहते ही वेदना शान्त हो गई। वह पार्श्वप्रभु को सिंहासन पर विराजमान कर निरभिमानतापूर्वक पूजा-सलाम करने लगा—अल्लाह, अलख और आदम तुम्हीं हो। तुम्हारे जैसा कोई नहीं। पीर, पैगम्बर, खुदा और सुल्तान तुम्हीं हो। मुझ बालक पर कृपा करो। तुम्हारी आज्ञा का कभी उल्लंघन नहीं करूंगा। पीर तो बहुत से हैं, पर तेइसवें राय (पार्श्वनाथ) आपके जैसा अन्य कोई नहीं। इस प्रकार स्तुति पूर्वक संघ को बुलाकर पार्श्वनाथ सौंप दिये। जालोर नगर में उत्सव हुआ। नित्य नये वादित्र बजने लगे। सधवा स्त्रियां गाना गाने लगीं। पुरुष रंग भरके खेलने लगे। याचकों की आशा पूर्ण हुई।

पार्श्वनाथ प्रतिमा को रथारूढ़ कर आडम्बरपूर्वक भिन्नमाल पहुंचाया। संघवी वीरचन्द हर्षित हुआ और सतरहभेदी पूजा रचाकर महोत्सव किया। चारों दिशाओं के संघ को आमंत्रित कर महोत्सव मनाये। संघ को पहरावणी पूर्वक सम्मानित किया। संघवी वीरचन्द्र ने तेरह महीनों से पार्श्वनाथ प्रभु की पूजा कर अपना अभिग्रह पूर्ण किया। सारे शोक सन्ताप दूर हुए, संघ के मनोरथ सिद्ध हुए।

—०—

सामायारी-पदं

दसविहा समायारी पण्णता, तं जहा—
[संगह-सिलोगो]
इच्छा मिच्छा तहक्कार, आवस्सिया य णिसीहिया।
आपुच्छणा य पडिपुच्छा, छंदणा य णिमंतणा ॥
उपसंपया य काले, सामायारी दसविहा उ ॥ —ठाणं, १०/१०२.

समाचार-दर्शन

आचार्य तुलसी जैन विश्व भारती के प्रांगण में

अणुव्रत अनुशास्ता युगप्रधान आचार्यश्री तुलसी का पावस-प्रवास कार्यक्रम जैन विश्व भारती के प्रांगण में उल्लासपूर्ण वातावरण में प्रगतिशील है।

प्रातःकालीन प्रवचन सभा का प्रारंभ सुमधुर कवि श्री "दिनकर मुनि" के ज्ञान-वर्द्धक उपदेशों से प्रारम्भ होता है, तत्पश्चात् आचार्यप्रवर इन दिनों (४ सितम्बर ८० से) जयाचार्य के जीवन पर आधारित श्री मघवागणि की राजस्थानी रचना **"जयसुजश रसायन"** का वाचन-विवेचन करते हैं तथा चतुर्थ आचार्य श्रीमज्जयाचार्य के जीवन घटना-क्रम पर विस्तृत प्रकाश डाल रहे हैं। पिछले दिनों आचार्य प्रवर ने साध्वी मातुश्री वन्दनाजी के विषय में अपना एक व्याख्यान प्रारम्भ किया था, जिसमें उनके गौरवशाली जीवन पर देदीप्यमान पुत्र की लेखनी से उच्चस्तरीय व निष्पक्ष दृष्टि से प्रकाश डाला गया था। श्रोतावर्ग ने इसमें गहरी रुचि ली। व्याख्यान ३ सितम्बर, ८० बुधवार को प्रवचन सभा में सम्पन्न हुआ।

श्रीमज्जयाचार्य निर्वाण-दिवस

दिनांक ६ सितम्बर, ८० को सुधर्मा सभा में आचार्यश्री के सान्निध्य में चतुर्थ आचार्य श्रीमज्जयाचार्य का निर्वाण-दिवस मनाया गया। मुनि श्री नवरत्नमलजी, साध्वी यशोधराजी आदि के प्रासंगिक भाषण हुए। श्रीमज्जयाचार्य ने जयपुर में नौ चातुर्मास किए थे और वहीं वे स्वर्गवासी हुए। जयपुर के प्रख्यात रामनिवास बाग में म्यूजियम मार्ग को आती हुई सड़क के मोड़ पर उनका दाहसंस्कार हुआ, जहाँ निर्मित उनका स्मारक राजस्थान की राजधानी के हजारों-हजारों पर्यटकों एवं श्रद्धालुजनों के आकर्षण का केन्द्र है। आचार्यप्रवर ने श्री जयाचार्य के प्रति भावभीनी श्रद्धांजलि समर्पित करते हुए आगामी वर्ष में मनाये जाने वाले **"जयाचार्य निर्वाण शताब्दी समारोह"** की रूपरेखा को प्रकाशित किया और सभी को इस महत्त्वपूर्ण कार्य में उत्साह से लग जाने की प्रेरणा दी।

इसी सभा में आसीन्द से आए श्री चान्दमलजी दूगड़ व श्री पन्नालाल जी आदि से जानकारी मिली कि (मेवाड़) में चातुर्मास कर रही साध्वी रायकुमारी जी (सरदार-शहर) का स्वर्गवास हो गया है। आस-पास के स्थानों से लगभग ढाई हजार भाई-बहिन

उस दिन वहां पहुंचे तथा उस छोटे से स्थान में लगभग पांच हजार व्यक्तियों ने उनके दाह-संस्कार में भाग लिया। आचार्य प्रवर ने उनके सरल व साधनामय जीवन पर प्रकाश डाला। दो मिनट के मौन ध्यान के साथ उनकी स्मृति सभा सम्पन्न हुई।

पर्युषण पर्व की आराधना

जैन विश्व भारती में आचार्यश्री के सान्निध्य में इस वर्ष के पर्युषण पर्व का नवाह्निक कार्यक्रम बड़े उल्लासपूर्ण वातावरण में परिसम्पन्न हुआ। निर्धारित दिवस से संबन्धित विषय पर सन्त-सतियांजी के प्रकाश डालने के अलावा स्वयं आचार्यश्री उस विषय पर सारगर्भित प्रवचन देते थे। मध्याह्न में सामूहिक सामायिक का आकर्षक कार्यक्रम व रात्रि में पारमार्थिक शिक्षण संस्था की बहिनों द्वारा अलग-अलग विषयों पर रोचक कार्यक्रम कविता, गोष्ठी, परिसंवाद आदि के रूप में होते रहे। संवत्सरी का कार्यक्रम भी प्रातः ७ बजे से मध्याह्न-उपरान्त लगभग ५ बजे तक दस घण्टा चला। पण्डाल की शोभा दर्शनीय थी। आचार्यश्री, युवाचार्यश्रीजी, महाश्रमणी साध्वीप्रमुखाश्रीजी के अतिरिक्त मुनिश्री किशनलालजी तथा मुनिश्री महेन्द्रकुमारजी द्वारा भगवान् महावीर से लेकर तेरापंथ उद्गम तक की ऐतिहासिक परम्परा पर प्रकाश डाला गया। इस वर्ष अलग-अलग साध्वीजी ने एक-एक आचार्य के जीवन व कर्तृत्व पर प्रकाश डाला। अष्टम आचार्यश्री कालूगणि संबंधी विवेचन स्वयं आचार्यश्री ने भावविभोर होकर किया तो स्वयं आचार्यश्री तुलसी के प्रति महाश्रमणी साध्वीप्रमुखाजी ने बड़ा श्रद्धोत्पादक प्रकाश डाला और उनके दीर्घ जीवन की कामना की। सैकड़ों की संख्या में पौषधव्रत में बैठे श्रावक-श्राविकावृन्द तथा हजारों ही श्रद्धालु भाई-बहिनों ने सम्पूर्ण आयोजन का पूरा लाभ लिया। दूसरे दिन प्रातःकालीन खमतखामणा का कार्यक्रम भी बड़ा प्रभावपूर्ण तथा चित्त को निर्मल करने वाला रहा। जैन विश्वभारती के अध्यक्ष श्री श्रीचन्दजी रामपुरिया, व्यवस्था समिति के सदस्य श्री बच्छराजजी नाहटा तथा पारमार्थिक शिक्षण संस्था की साधिका कुमारी संतोष ने अपने विचार प्रगट किए। आचार्यप्रवर के प्रमुख प्रवचन के अलावा युवाचार्यश्री व साध्वी प्रमुखाश्री जी के भी प्रासंगिक भाषण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रहे। मुनिश्री किशनलाल जी ने कार्यक्रम का संयोजन करते हुए इस दिवस के महत्त्व पर प्रकाश डाला।

आचार्यश्री का ४५ वां पदारोहण-समारोह

दिनांक १८, १९ एवं २० सितम्बर को आचार्यप्रवर का ४५ वां पदारोहण समारोह का त्रिदिवसीय कार्यक्रम सुधर्मा सभा के पण्डाल में पूर्ण हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। बाहर से यात्रियों का आवागमन इतनी बड़ी संख्या में हुआ कि देखने वाले चकित रह गए। लाडनूं वालों का कहना है कि इतने अधिक यात्री इससे पहले कभी यहां नहीं आए।

मुनिश्री किशनलालजी ने इस त्रिदिवसीय समारोह का संयोजन किया। संस्था की बहिनों के मंगलाचरण से प्रारंभ इस कार्यक्रम में श्री सुपारस पगारिया ने एक सुन्दर कविता सुनाई तथा पारमार्थिक शिक्षण संस्था की बहिनों का सामूहिक सुमधुर गायन हुआ। "युवादृष्टि" के सम्पादक तथा अखिल भारतीय तेरापंथ युवक परिषद् के अध्यक्षश्री विजयसिंह

कोठारी ने पत्रिका का **"पदारोहण अंक"** आचार्य श्री को भेंट किया। साध्वी सुमनश्री जी ने एक चित्र-संग्रह **"चित्र आपके भाव हमारे"** शीर्षक से इस अवसर पर भेंट किया। साध्वी विमलप्रज्ञाजी ने संस्कृत पत्रिका **"आराधना"** भेंट की। बम्बई से आए हुए हिन्दी **"ब्लिट्ज"** के सम्पादक श्री नन्दकिशोर नौटियाल, भू० पू० विधायक एवं हिन्दी कवि श्री राममनोहर त्रिपाठी व बम्बई दिगम्बर समाज के प्रमुख श्रावक श्री नरेन्द्र पाटिल के इस अवसर पर महत्त्वपूर्ण भाषण हुए। सबने इस मंगलमय अवसर पर अपनी हार्दिक प्रसन्नता प्रगट करने के साथ आचार्यश्री के दीर्घायुष्य व लम्बे शासन की कामना की। बम्बई से पधारी हुई तमिल भाषा-भाषी प्राध्यापिका राजम् नटराजन् का भी हिन्दी में वक्तव्य बड़ा महत्त्वपूर्ण रहा। मुनिश्री चौथमलजी के मुक्तक तथा मुनिश्री महेन्द्रकुमारजी का प्रभावपूर्ण भाषण हुआ, जिसमें उन्होंने संस्था की विभिन्न प्रवृत्तियों पर सविस्तार प्रकाश डाला।

सबसे महत्त्वपूर्ण भाषण युवाचार्य श्री महाप्रज्ञजी का हुआ, उन्होंने इस दिन को **"मानव निर्माण दिवस"** की संज्ञा दी। साध्वीप्रमुखाश्री कनकप्रभा जी व साध्वी मंजुलाजी का भाषण भी हुआ। साध्वी वृन्द ने सामूहिक रूप से अभिनन्दन-गीतिका प्रस्तुत की। जयाचार्य निर्वाण शताब्दी समिति के संयोजक श्री धर्मचन्द चोपड़ा ने निर्वाण शताब्दी योजना पर प्रकाश डाला और प्रथम दिन के आयोजन का समापन स्वयं आचार्यप्रवर की मंगलवाणी के साथ हुआ। उन्होंने शासन संगीत के दो पद्यों के साथ अपने मंगल प्रवचन का प्रारंभ किया तथा बड़े प्रभावपूर्ण शब्दों में संघ के विकास के प्रति तथा स्वयं अपने प्रति भी मंगल भावना व्यक्त की। इसी तरह तीन दिनों तक तीनों समय के कार्यक्रमों में अपने भाषणों में विभिन्न वक्ताओं तथा साधु-साध्वियों ने आचार्यश्री के दीर्घायुष्य की व उनके यशस्वी शासन की अनुपम देन का गुण-गान किया। इस तरह यह त्रिदिवसीय समारोह बड़ा ही प्रभावपूर्ण व अपने ढंग का एक अनुपम आयोजन रहा। बाहर से आने वाले यात्रियों का तांता इतना अधिक रहा कि सारा लाडनूं नगर दर्शनार्थियों से छा गया, सब तरफ वे ही वे नजर आ रहे थे।

मेवाड़ की वृद्ध श्राविका को श्रद्धांजलि

दिनांक ११ सितम्बर की प्रवचन सभा में मेवाड़ के श्री भंवरलालजी कर्णावट तथा प्रख्यात पत्रकार व अणुव्रत-प्रवक्ता श्री देवेन्द्रकुमार जी, संपादक **"संस्थान"**, की मातुश्री वृद्ध श्राविका श्रीमती गमेरबाई को, जिनका ९० वर्ष की अवस्था में राजसमन्द (मेवाड़) में संथारे पूर्वक निधन हो गया था, श्रद्धांजलि अर्पित की गई। आचार्यप्रवर व साध्वी प्रमुखाश्री जी ने उनके सम्बन्ध में अपने उद्गार प्रगट किए। गत ४ सितम्बर को ही उनका निधन हुआ और सभी रूढ़िगत प्रथाओं का परित्याग कर उनके परिवार ने अपने अन्य सम्बन्धियों सहित आचार्यश्री के दर्शनों का सुयोग प्राप्त किया। सभा के प्रारंभ में श्री देवेन्द्रजी ने अपनी मातुश्री का भावनापूर्ण वर्णन प्रस्तुत किया। हजारों भाई-बहिन श्रद्धा विभोर हो उठे।

संचालिका समिति की बैठक

१० सितम्बर को जैन विश्वभारती की संचालिका समिति ने संस्था का बजट स्वीकार करने के साथ-साथ छह आजीवन सदस्यों की स्वीकृति दी तथा संचालिका समिति

में निम्न दो सदस्यों को और जोड़ा गया—

१. श्री छोटेलाल जी नाहटा, कलकत्ता।

३. श्री हुलासचन्दजी गोलछा, विराटनगर।

इस बैठक में संस्था-उपाध्यक्ष श्री जेठाभाई एस. जवेरी द्वारा प्रस्तुत एक महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया, जिसमें कहा गया था कि--'संस्था का आर्थिक पक्ष सुदृढ़ हो, अतः अर्थ संग्रह का दायित्व मात्र केन्द्र पर ही न रहकर, अर्थ-संग्रह की जिम्मेवारी भिन्न-भिन्न विभागों को ही, उनकी प्रवृत्तियों को समुचित रूप से चालू रखने हेतु सौंप दी जाय। इनके अनुसार निर्णय लिया गया कि साधना, शिक्षा एवं सेवा विभाग अपनी प्रवृत्तियों को सुचारु रूप से चलाने के लिए स्वयं सारी आर्थिक जिम्मेवारी उठावें। केन्द्र व इन विभागों का आपसी आर्थिक तालमेल किस रूप में रहे, इसके लिए भी एक रूपरेखा को स्वीकार किया गया और कम से कम दो वर्ष के लिए इस नवीन प्रयोग की क्रियान्विति करने का निश्चय रहा। बैठक की अध्यक्षता श्री श्रीचन्दजी रामपुरिया ने की तथा आभार प्रदर्शन उपमन्त्री श्री जे० के० जौहरी ने किया।

राजस्थान के न्यायाधिपति श्री गुमानमल लोढा का आगमन

दिनांक २१ सितम्बर रविवार की प्रवचन सभा में राजस्थान उच्च न्यायाधिपति श्री गुमानमल लोढा ने प्रमुख रूप से भाग लिया। संस्था अध्यक्ष श्री श्रीचन्द रामपुरिया व व्यवस्था समिति की ओर से श्री बच्छराज जी नाहटा ने उनका अभिनन्दन किया। प्रमुख समाजसेवी श्री विहारीलालजी जैन (कलकत्ता) ने विस्तार से जैन विश्वभारती की समस्त प्रवृत्तियों का परिचय दिया। श्री महेन्द्रमुनि (बम्बई) ने संस्था के आध्यात्मिक पक्ष पर समुचित प्रकाश डाला। युवाचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने अपने प्रवचन में विज्ञान और धर्म तथा तेरापंथ संगठन की अनुपम देन का प्रभावपूर्ण वर्णन किया। श्रीगिरधर शर्मा, एडवोकेट ने भी मुख्य अतिथि का परिचय देते हुए आचार्यश्री तुलसी के मानव कल्याणकारी कार्यों की सराहना की। न्यायाधीश श्री लोढा ने कहा—इस ऐतिहासिक नगर लाडनूं में आज आचार्यप्रवर के दर्शन कर तथा इस महान् संस्थान को देखकर मैं धन्यता का अनुभव कर रहा हूं। जितनी महान् संस्था मैं आज देख रहा हूं, उतनी कल्पना मेरी नहीं थी। इसके प्रेरक आचार्यप्रवर न केवल इस समाज व राष्ट्र की ही बल्कि विश्व की एक बड़ी हस्ती हैं, और आने वाली पीढ़ियाँ इन्हें व उनके द्वारा प्रेरित इस संस्था को नालन्दा आदि की तरह युगों-युगों तक याद करेगी। इस गंगोत्री का प्रवाह तथा यहां की सुरभि दूर-दूर तक कायम रहेगी, फैलेगी। इसके द्वारा न केवल जैन-दर्शन को ही नया मोड़ दिया जा रहा है बल्कि सारे मानव समाज को उद्बोधित करने का यह एक महान् उपक्रम है। आचार्य तुलसी एक ज्योति पुंज हैं, जो समस्त मानवता को सन्मार्ग पर अग्रसर कर रहे हैं। मेरा विश्वास है कि यह महान् संस्था एक दिन इस देश की अनुपम गंगोत्री बन कर रहेगी।"

न्यायाधीश श्री लोढ़ा का आचार्यवर से वार्तालाप

दिनांक २१ सितम्बर को प्रातःकालीन कार्यक्रम के पश्चात् राजस्थान उच्च न्यायालय के न्यायाधीश श्री गुमानमल लोढा ने लगभग आधे घण्टे तक आचार्यश्री तुलसी एवं युवाचार्यश्री महाप्रज्ञजी के साथ वार्तालाप किया।

आचार्य प्रवर—"यद्यपि वर्तमान युगीन आचार के संकट से सभी समाज एवं वर्ग न्यूनाधिक रूप से प्रभावित हैं, फिर भी जैन समाज का औसतन स्तर इस दृष्टि से ऊंचा है। हमें निराशा की दृष्टि को छोड़ ऐसे व्यक्तियों को आगे लाना होगा, जिनकी प्रामाणिकता और नैतिकता की सर्वत्र छाप हो।"

लोढाजी—"आपके इस दृष्टिकोण के साथ मैं सहमत हूं कि चरित्रवान् व्यक्तियों का सम्मान किया जाना चाहिए। विशेषतः धार्मिक मंचों पर ऐसे ही व्यक्ति प्रतिष्ठा को प्राप्त हों।"

युवाचार्यश्री—हम लोगों ने सभी सम्प्रदायों के जैन साधुओं एवं श्रावकों के लिए एक न्यूनतम आचार-संहिता अपनाने की योजना पर चिन्तन किया है। हम चाहते हैं कि जैनधर्म की प्रभावना के लिये जैन साधुओं और श्रावकों का स्तर इस संहिता से भिन्न न हो।

लोढाजी—इसकी बहुत बड़ी आवश्यकता है। जहां एक ओर जैन मुनि सारे विश्व में त्याग और अपरिग्रह के उच्च आदर्श के रूप में सम्मान पा रहे हैं, वहाँ मैंने स्वयं देखा है कि कुछ साधुओं में स्वच्छन्दाचार एवं अनेक विकृतियां आ गई हैं, जो जैन साधु के लिए अत्यन्त लज्जा की बात है। मैं स्वयं मन्दिरमार्गी हूं पर मैंने कुछ साधुओं को परिग्रह के संग्रह में लगे हुए देखा है। उनके बैंक-बैलेंस पाये गए हैं।

आचार्यश्री—पालीताणा की स्थिति भी हमने जब देखी, लगा कि वहां जैन साधु-संघ की स्थिति बहुत दयनीय है, चिन्तनीय है।

लोढाजी—आचार्यजी !आप क्या कहते हैं। वहाँ की स्थिति को देखकर मेरी आंखों में आँसू आ गये। कैसी विचित्र बात है! किस प्रकार से वहाँ साधु-साध्वी स्वयं अपना अपमान करवा रहे हैं।

आचार्य श्री—वहां हमने देखा कि बहुत धन भी खर्च हो रहा है, लेकिन केवल मन्दिरों के निर्माण में। जब यह सुझाव सामने आया कि इतने अर्थ-व्यय से तो विश्वविद्यालय चलाए जा सकते हैं, ज्ञान और विद्या का प्रसार किया जा सकता है, तब बात सामने आई कि देव-द्रव्य का उपभोग उसमें नहीं किया जा सकता।

लोढाजी—मेरी तो मान्यता है कि यदि अर्थ का उपयोग मानव के लिए, ज्ञान के लिए नहीं होगा, तो देवता भी कहां प्रसन्न होंगे? इससे अधिक अच्छा उपभोग देव-द्रव्य का भी क्या हो सकता है? वैसे आज जैन-समाज में अर्थ की कमी नहीं है। यदि सही उपभोग हो, तो अर्थ अपने आप आता है।

आचार्य श्री—जैन विश्व भारती के रूप में जो उपक्रम प्रारंभ हुआ है, वह व्यापक लक्ष्य को लेकर समाज के सामने आया है। सभी लोगों के लिए यह उपक्रम है।

लोढाजी—यह महान् संस्थान है। यह प्राच्य विद्याओं के अनुसंधान और शिक्षण प्रशिक्षण का संस्थान है। इसमें सभी लोग उपकृत हो सकते हैं।

आचार्य श्री—यहां के साधना-केन्द्र में मनुष्य को बदलने की दिशा में प्रायोगिक स्तर पर कार्यक्रम चल रहे हैं।

युवाचार्य श्री – धर्म का उपदेश मनुष्य को बदलने की प्रेरणा दे सकता है, पर परिणाम तभी आयेंगे, जबकि उसका वास्तविक प्रयोग किया जाये। जैन-धर्म ने ग्रहण और आसेवन—दोनों पर बल दिया है। ग्रहण ज्ञानात्मक है, आसेवन प्रयोगात्मक। साधना के प्रयोग वैज्ञानिक आधारों को लिए हुए हैं, जो मनुष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के रूपान्तरण की क्षमता रखते हैं। जैन विश्व भारती साधना केन्द्र के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी है। अणुव्रत आन्दोलन का यह अगला चरण है।

लोढाजी—अणुव्रत आन्दोलन ने जो दृष्टिकोण दिया है, वह आज के युग की सबसे बड़ी आवश्यकता है। युग की मांग को इसने पूरा किया है।

युवाचार्य श्री—आज युग में सभी वर्गों के लोगों से तथा विशेषतः बौद्धिक वर्ग से जो आध्यात्मिक स्वर सुनाई दे रहा है, उनका श्रेय बहुत कुछ अणुव्रत आन्दोलन को है। आन्दोलन ने आध्यात्मिक मूल्यों की आवश्यकता एवं महत्त्व को निश्चित रूप से उजागर किया है।

लोढाजी—अणुव्रत आन्दोलन से प्रेरित होकर आज सारे समाज में चिंतन-मनन की एक श्रृंखला बनी है। समाज आन्दोलित हुआ है। आपने ध्यान के माध्यम से जो जीवन को बदलने की प्रक्रिया का प्रारंभ किया है वह हमारे समाज का कायाकल्प करेगी। ऐसी प्रक्रिया समाज में चलेगी, तो विकृतियों को कम से कम पनपने का अवसर मिलेगा।

जैन विश्व भारती की स्मारिका प्रकाशन की योजना

जैन विश्व भारती को समस्त प्रवृत्तियों एवं गतिविधियों को सुचारु रूप से प्रचारित प्रसारित करने के उद्देश्य से जैन विश्व भारती स्मारिका प्रकाशन की एक योजना विचाराधीन है। इस महत्त्वपूर्ण कार्य के संयोजन का दायित्व समाज के युवा कार्यकर्ता श्री माणकचंद चोरड़िया (छापर) ने अपने ऊपर लिया है। श्री चोरड़िया इस हेतु कलकत्ता, बिहार, बंगाल, आसाम, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, बम्बई, सूरत, अहमदाबाद, मद्रास, बैंगलौर, हैदराबाद, मध्य प्रदेश तथा राजस्थान आदि क्षेत्रों का दौरा करेंगे तथा वहां के वरिष्ठ कार्यकर्ताओं के सहयोग से स्मारिका हेतु विज्ञापन-संग्रह का कार्य करेंगे। आशा है, समाज के सभी लोग इसमें अपना सक्रिय सहयोग देंगे।

तेरापंथ धर्म संघ की सबसे पुरानी दीक्षित साध्वी श्री लाडांजी का स्वर्गवास

श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथ धर्मसंघ की सबसे पुरानी दीक्षित साध्वी श्री लाडांजी का ९३ वर्ष की अवस्था में एक लम्बी बीमारी के पश्चात् दिनांक १९ सितम्बर, ८० शुक्रवार को मध्याह्न उपरान्त ४ बज कर ४४ मिनट पर चूरू जिले के प्रसिद्ध कस्बे श्रीडूंगरगढ़ में स्वर्गवास हो गया, वे पिछले ३२ वर्षों से शारीरिक स्थिति के कारण इस कस्बे में स्थिरवासिनी थी। इनका जन्म लाडनूं नगर में विक्रम संवत् १९४४ की कार्तिक कृष्णा एकादशी को स्व० मुल्तानमलजी बोरड़ (पिता) व मातु श्री छोगाबाई के यहां हुआ था। वे अपने

परिवार की लाड़ली संतान थी। अतः उन्हें नाम भी लाड़कुंवर दिया गया। बचपन से ही उनमें वैराग्य भावना प्रबल हो जाने से उन्होंने बहू बनने का मार्ग त्याग कर वैराग्य मार्ग को अपनाया तथा शादी के निर्धारित दिन से पन्द्रह दिन पूर्व ही बैसाख बदी पंचमी विक्रम संवत् १९५६ को तेरापंथ धर्म संघ के सप्तम आचार्य श्री डालगणि के द्वारा ११ वर्ष की बाल वय में दीक्षा ग्रहण कर इस समाज में एक गौरवशाली कीर्तिमान स्थापित करने वाली साध्वी हो गई। इस धर्म संघ के छः आचार्यों के दर्शन-लाभ का सौभाग्य पाने वाली साध्वी लाडांजी का ८२ वर्ष का साधु जीवन रहा। आठ वर्ष गुरुकुल में निवास कर १९ वर्ष की अवस्था में अग्रगण्य का स्थान पाया। वे गत ७३ वर्षों से अग्रगण्य थीं। ४०-४१ वर्षों तक अनेक प्रदेशों में आपने पाद-भ्रमण किया। इन ४१ वर्षों में आपने ३२ वर्ष के स्थिरवास से पूर्व चूरू जिले में २२, नागौर जिले में ६, बीकानेर गंगानगर क्षेत्र में ६, मेवाड़ में ५, तथा मारवाड़ व मेरवाड़ा में एक-एक चातुर्मास किये।

वे समता, साधना व संयम की साक्षात् प्रतिमा थी। आप अत्यन्त विनयवान, गुरु भक्त एवं स्मरणशक्ति-संपन्न एक मेधावी साध्वी थी। अपनी आचार-शुद्धता, साधना, विवेक, विनम्रता के कारण इन्हें विनय, निष्ठा आदि से भी संबोधित कर सम्मानित किया जाता रहा है। आप सहनशील व गुणग्राहक दृष्टि वाली साध्वी थी, जिन्होंने कई माह पूर्व वृद्धावस्था में २७ दिनों की तपस्या की। अनेक छोटी-मोटी तपस्याओं का तो क्या उल्लेख किया जाय? तपस्या के साथ-साथ स्वाध्याय, समता, सामायिक व मौन का क्रम भी इनका रहता था। इन्हें **दशवैकालिक, नन्दी सूत्र** एवं अनेक थोकड़े कण्ठस्थ थे और अन्तिम समय तक **उत्तराध्ययन** के पैंतीस अध्ययन को चितारने का क्रम इन्होंने बनाये रखा तथा अन्त समय तक जागरूकतापूर्वक संयम साधना में लीन रही। दिनांक २३ सितम्बर को सुधर्मा सभा में आचार्यश्री के सान्निध्य में "साध्वी लाडांजी की स्मृति सभा" का कार्यक्रम रहा। इस सभा में श्रीडूंगरगढ़ के श्री कन्हैयालालजी छाजेड़ ने साध्वीश्री के कीर्तिमानों को प्रकाशित किया तथा आचार्यश्री ने कहा—"धर्म संघ तो ऐसा विशाल समुद्र है, जिसमें अनेक बहुमूल्य रत्न छिपे हैं। साध्वी लाडांजी ने २५ वर्षों तक साध्वियों में अपना प्रथम स्थान बनाये रखा। दीक्षा पर्याय में २५ वर्षों में उनका प्रथम स्थान रहा। ऐसी कीर्तिमती, ज्ञानवृद्धा, वयोवृद्धा एव संयमी आत्मा के स्वर्गगमन के पावन क्षणों में हमारी शत-शत श्रद्धांजलि। सभा में **लोगस्स** ध्यान के साथ सामूहिक ध्यान व मौन रखकर उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की गई।

जय विद्यापीठ (छात्रावास) एक अभिनव प्रयोग

शिक्षा और संस्कार दो आधारभूत तत्त्व हैं, जिस पर मनुष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण और विकास निर्भर करता है। संस्कार-निर्माण का यह महत्त्वपूर्ण कार्य बाल्यावस्था से ही प्रारंभ होना अनिवार्य है। इसके लिए अपेक्षित है सनियोजित कार्यक्रम और साफ सुथरा पवित्र वातावरण, जिससे आदर्शोन्मुख जीवन जीने की प्रेरणा सहज ही प्राप्त हो सके।

पिछले कई महीनों से स्वयं आचार्य श्री तुलसी तथा जैन विश्व भारती से संबन्धित चिन्तनशील कार्यकर्ताओं के मन में शिक्षा और संस्कार-निर्माण संबंधी योजना को प्रारंभ करने का विचार-मंथन बराबर चलता रहा। इसके लिए आवश्यकता थी किसी अनुभवी

और निष्ठावान् कार्यकर्ता की, जो सम्पूर्ण योजना को क्रियान्वित करने का दायित्व स्वीकार कर सके। अन्त में आचार्यश्री की प्रेरणा से शिक्षा क्षेत्र के अनुभवी तथा समाज-सेवी कार्यकर्ता श्री सदासुख कोठरी इस योजना के निदेशक तथा श्री राणमल जीरावला सह-निदेशक नियुक्त हुए। परिणाम स्वरूप २४ अगस्त १९८० को प्रातःकाल आचार्यश्री के सान्निध्य में जय विद्यापीठ (छात्रावास) का बीजारोपण हुआ।

यह भी शुभ संयोग ही कहा जायेगा कि श्री केवलचन्द नाहटा मंत्री, श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा, कलकत्ता उद्घाटनकर्ता के रूप में हमारे बीच उपस्थित रहे। उद्घाटन के साथ ही साथ उन्होंने छात्रों के लिए ओढ़ने-बिछाने का सामान, बर्तन और फर्नीचर आदि आवश्यक साधन छात्रावास के लिए जुटा देने की घोषणा कर हमारा उत्साह-वर्द्धन किया। लाडनूं निवासी श्री खेमचन्द चोरड़िया तथा चूरू निवासी श्री शेरसिंह बोथरा ने एक वर्ष के लिए क्रमशः पन्द्रह सौ रुपये और एक हजार रुपये मासिक का अनुदान देने की घोषणा कर छात्रावास को गतिशील बनाने की दिशा में सराहनीय योगदान किया।

योजना का अभी बीजवपन ही हुआ है। स्वप्न बहुत विराट् है। छात्रावास और विद्यालय दोनों साथ-साथ चलें तथा कालेज स्तर तक की शिक्षा यहीं छात्रों को दी जा सके, ऐसी व्यवस्था करनी है। इसके लिए पर्याप्त अर्थ, निरन्तर परिश्रम और सामाजिक कार्यकर्ताओं के सक्रिय सहयोग की अपेक्षा है।

छात्रावास का प्रारंभ उत्साहजनक है तथा भविष्य के प्रति हम आशान्वित हैं। साफ सुथरा आवास, चारों ओर फैला हुआ प्रकृति का हरा-भरा विस्तार, स्कूली पाठ्यक्रम और नैतिक शिक्षा का समन्वय तथा पूर्ण अनुशासित जीवन आदि छात्रावास की अपनी विशेषताएं हैं। छात्रों के मनोरंजन, स्वास्थ्य और बाह्य ज्ञान-वृद्धि को दृष्टिगत रखते हुए सुयोग्य शिक्षकों तथा धर्माचार्यों द्वारा विशेष कार्यक्रमों का आयोजन भी समय-समय पर किया जाता है। चालू सत्र में केवल छठी कक्षा के लिए पन्द्रह स्थान रिक्त हैं, जो बाहर से आने वाले छात्रों के लिए सुरक्षित हैं। अनुशासन मानने और अध्ययन में रुचि रखने वाले छात्रों को ही छात्रावास में प्रवेश प्राप्त हो सकेगा। अतः लाडनूं से बाहर के जो सज्जन अपने बच्चों को छात्रावास में प्रवेश दिलाना चाहें, उन्हें चाहिए कि वे शीघ्रातिशीघ्र हमारे कार्यालय से सम्पर्क स्थापित करें, अथवा लिखित सूचना भेजें। कक्षा छठी के सभी विषयों के अध्यापन की समुचित व्यवस्था की जा चुकी है।

इस वर्ष प्रवेश लेने वाले विद्यार्थियों से सिर्फ पचहत्तर रुपये मासिक शुल्क के रूप में लिया जायेगा।

हमारा पूर्ण विश्वास है कि आचार्य प्रवर और उदरमना समाज के सहयोग से यह छात्रावास शीघ्र ही अपना इच्छित स्वरूप धारण करने में सफल होगा।

सेवाभावी कल्याण केन्द्र

सेवाभावी कल्याण केन्द्र के अन्तर्गत आयुर्वेद चिकित्सालय अहर्निश प्रगतिशील है। रोगियों की चिकित्सा का कार्य सुव्यवस्थित ढंग से चल रहा है। गत अगस्त में चिकित्सा

लाभ लेने वाले रोगियों की संख्या इस प्रकार रही है—

माह	नवीन	प्राचीन	पुरुष	स्त्री	बाल	-	योग
अगस्त	२३४०	६५३८	२८८९	३७५३	२२३६	-	८८७८

इस प्रकार दैनिक रोगियों की औसत संख्या २९६ रही, जो वर्ष के अगस्त माह की सर्वाधिक संख्या है।

रसायनशाला—उक्त अवधि में अग्नितुण्डी वटी, कासामृत, ताप्यादि लौह, आरोग्यवर्धिनी, पौष्टिक चूर्ण, मं० सिंह नाद गुग्गुल, सौवर्चल पाक वटी, सामुद्रादिचूर्ण, अकीक पिष्टी, चन्द्र प्रभा वटी, एलादि चूर्ण, लवण भास्कर, विल्वादि चूर्ण, एलादि बटी, खदिरादि वटी, विडंगादि चूर्ण आदि ५० औषधियों का निर्माण किया गया है।

जैन विश्व भारती के प्रांगण में युग प्रधान आचार्य श्री तुलसी का चातुर्मास होने के कारण बाहर से बहुसंख्यक व्यक्तियों के पधार जाने से रोगियों की संख्या में वृद्धि हुई है और सेवाभावी कल्याण केन्द्र को अधिक रोगियों की सेवा का सुअवसर प्राप्त हुआ है।

जैन विश्व भारती के नव-निर्वाचन में सेवा विभाग के चेयरमेन श्री जब्बर मलजी भंडारी निर्वाचित हुए हैं। उन्होंने एक उपसमिति का गठन किया है। सूची निम्न प्रकार है—

१. श्री जब्बरमल भंडारी (जोधपुर)	चेयरमेन
२. श्री माणकचंद सेठिया (सुजानगढ़)	सदस्य
३. श्री कुन्दनमल बैंगानी (बीदासर)	सदस्य
४. श्री झूमरमल बैंगानी (बीदासर)	सदस्य
५. श्री कन्हैयालाल बैद (लाडनूं)	सदस्य
६. श्री बच्छराज चोरड़िया (लाडनूं)	सदस्य
७. श्री जे० के० जौहरी (जोधपुर)	सदस्य

आशा है, इस नव-निर्वाचित उप-समिति के तत्त्वावधान में सेवाभावी कल्याणकेन्द्र का कार्य उत्तरोत्तर प्रगतिशील होगा।

शोध विभाग

जैन विद्या परिषद् का अष्टम अधिवेशन १८, १९ एवं २० अक्टूबर ८० को **"आगम मंथन"** विषय पर आयोजित किया गया है; जिन विद्वानों को आमंत्रित किया गया था, उनमें से अधिकांश भाग लेने हेतु पधार चुके हैं।

इस अवसर पर सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय के कुलपति माननीय पण्डित बद्रीनाथ शुक्ल को उद्घाटन हेतु आमंत्रित किया गया है। सुप्रसिद्ध गांधीवादी विचारक अणुव्रत-प्रवक्ता श्री जैनेन्द्रकुमार के पहुंचने की भी सम्भावना है। निम्नलिखित विद्वान् अधिवेशन में भाग ले रहे हैं—

१. डॉ० टी० जी कलघाटगी	जैन-आगमों में मनोविज्ञान
२. डॉ० सागरमल जैन	आचारांग-सूत्र में मनोवैज्ञानिक तथ्य
३. डॉ० रामचन्द्र द्विवेदी	अर्धमागधी-आगमों का छन्द एवं अलंकार विषयक अध्ययन
४. डॉ० नेमीचन्द जैन	जैन-आगमों के समतावाद से आधुनिक साम्यवाद की तुलना
५. डॉ० रामसिंह तोमर	प्राचीन भारतीय यति परम्पराओं में निग्रन्थ सम्प्रदाय का वैशिष्ट्य
६. प्रो० जगन्नाथ उपाध्याय	जैन-आगमों एवं पालि-त्रिपिटकों का आचार शास्त्रीय तुलनात्मक अध्ययन
७. डॉ० बी० भट्ट	निर्युक्तियों पर प्रकाशित लेखों आदि की सूची एवं सारसंग्रह अथवा जैन-आगम : कालक्रमिक विकास
८. डॉ० बी० के० खड़बड़ी	चूर्णि एवं चूर्णिकारों का समीक्षात्मक अध्ययन
९. प्रो० एल० सी० जैन	जैन-आगमों में गणितिक तथ्य (महत्त्वपूर्ण सूत्र) तथा अन्य सिद्धान्तों का गणित के इतिहास की दृष्टि से मूल्याङ्कन
१०. श्री श्रीचन्द चोरड़िया	जैन-आगमों में मोहनीय कर्म का स्वरूप
११. डॉ० अजित शुकदेव शर्मा	जैन-आगमों में भक्तिवाद
१२. डॉ० कोमल चन्द जैन	जैन-आगमों में नारी का स्थान
१३. डॉ० एस० एन० घोसाल	विवागसूय का समालोचनात्मक अध्ययन
१४. डॉ० प्रेमसुमन जैन	दस पइन्ना (दश प्रकीर्णक) : एक अध्ययन
१५. डॉ० महावीरराज गेलड़ा	जैन-आगमों में रसायन शास्त्रीय तत्त्व
१६. डॉ० फूलचन्द जैन 'प्रेमी'	अर्धमागधी आगमों के परिप्रेक्ष्य में मूलाचार अध्ययन
१७. डॉ० महावीरसिंह मुरडिया	भगवती सूत्र का वैज्ञानिक अध्ययन
१८. डॉ शक्तिधर शर्मा	सूर्यप्रज्ञप्ति, चन्द्रप्रज्ञप्ति
१९. डॉ० सज्जनसिंह लिश्क	सूर्यप्रज्ञप्ति, चन्द्रप्रज्ञप्ति
२०. डॉ० कमलेशकुमार जैन	अनुयोगद्वार सूत्र में रस-विवेचन

"जैन विश्व भारती शोध विद्वत्परिषद्" का गठन

दिनांक १-९-१९८० को जैन विश्व भारती के प्रांगण में युगप्रधान आचार्य श्री तुलसी के सान्निध्य में एक गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें स्थानीय विद्वानों के अतिरिक्त बाहर से पधारे हुए अनेक विद्वानों ने भाग लिया।

इस गोष्ठी में जैन विद्या के अधिकारी विद्वानों को तैयार करने पर चिन्तन हुआ।

फलस्वरूप एक परिषद् का गठन किया गया और उसके सदस्यों को दी जाने वाली सुविधाओं पर भी विचार किया गया, जो निम्न प्रकार हैं—

नाम—इस परिषद् का नाम "जैन विश्व भारती शोध विद्वत्परिषद्" (J.V.B. Council of Research Scholars) होगा।

सदस्य जैन विश्व भारती द्वारा सम्मान्य संस्तुत जो व्यक्ति ११-०० रुपये वार्षिक सदस्यता शुल्क जमा करायेगा, वह इस परिषद् का सदस्य होगा।

सुविधाएं—(क) परिषद् प्रत्येक सदस्य के लिए ? एक सितम्बर, १९८० से ३१ अगस्त, १९८१ तक कुल एक वर्ष के लिए एक हजार रुपये आकस्मिक व्यय हेतु प्रदान करेगी। यदि किसी कान्फ्रेंस में परिषद् के सदस्य को सादर आमंत्रित किया जाता है तो जाने-आने का मार्ग-व्यय आदि इसी के अन्तर्गत सम्मिलित होगा।

(ख) अवकाश के समय जैन विश्व भारती में रहकर शोध/खोज/, अध्ययन करने वाला प्रत्येक सदस्य जैन विश्व भारती द्वारा समस्त सुविधाएं (भोजन, आवास आदि) प्राप्त करने का अधिकारी होगा। ये सुविधाएं आकस्मिक व्यय के अतिरिक्त होंगी।

(ग) प्रत्येक सदस्य को परिषद् द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम का अध्ययन करना होगा। इस वर्ष के लिए निर्धारित पाठ्यक्रम इस प्रकार है—

१. जैन सिद्धांत दीपिका
२. जैन दर्शन : मनन और मीमांसा
३. भिक्षु विचार दर्शन
४. उत्तराध्ययन-सूत्र (पूर्ण)
५. ठाणांग-सूत्र (४,९,१०)
६. श्रमण महावीर,
७. डाक्ट्रिन ऑफ द जैन (शुब्रिग)
८. पाइय संगहो
९. तुलसी मंजरी
१०. प्राकृत स्वयं शिक्षक
११. काले कृत संस्कृत व्याकरण (हिन्दी व अंग्रेजी)
१२. सम्बोधि।

(घ) सभी विद्वानों को जैन विश्व भारती द्वारा प्रकाशित चुना हुआ साहित्य एवं शोध पत्र-पत्रिकाएं निःशुल्क भेंट स्वरूप दी जायेंगी।

(ङ.) उक्त साहित्य के अतिरिक्त पाठ्यक्रम में सहायक अन्य ग्रन्थ भी सदस्य क्रय करना चाहें तो जैन विश्व भारती की सहायता से क्रय कर सकते हैं, किन्तु इसकी राशि रुपये २५०) से अधिक नहीं होगी। ये ग्रन्थ वर्द्धमान ग्रन्थागार की सम्पत्ति होंगे, अतः अध्ययन के पश्चात् ग्रन्थ वर्द्धमान ग्रन्थागार को वापिस करने होंगे।

परीक्षण—प्रत्येक छः महीनों के अन्तराल से एक परीक्षण-गोष्ठी का आयोजन आचार्यश्री के सान्निध्य में किया जायेगा, जिसमें सभी सदस्यों को अनिवार्य रूप से भाग

लेना होगा। इस गोष्ठी के माध्यम से विगत छः महीनों में किये हुए अध्ययन का परीक्षण किया जायेगा। इस अवसर पर किये गए अध्ययन के आधार पर प्रत्येक सदस्य एक लघु निबन्ध (जो फुलस्केप साइज के कम से कम १५ पृष्ठों का हो) तैयार करेगा। संभव हो तो निबन्ध की भाषा अंग्रेजी हो।

प्रमाण शास्त्र पर गोष्ठी का आयोजन

दिनांक १९-८-८० को रात्रि में 'अर्हद्वन्दना' के पश्चात् महाश्रमणी साध्वीप्रमुखा-श्री कनकप्रभाजी के सान्निध्य में प्रमाणशास्त्र पर एक गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें साध्वी समुदाय एवं ब्राह्मी विद्यापीठ के प्राध्यापक सम्मिलित थे।

गोष्ठी का शुभारम्भ करते हुये साध्वी कनकश्री जी ने बताया कि आचार्यश्री तुलसी के बहु-आयामी व्यक्तित्व का सम्बल प्राप्तकर संघ को विकसित करने के अनेक उपक्रम सुनियोजित ढंग से चल रहे हैं। आज की यह लघु गोष्ठी संख्या की दृष्टि से अल्प होती हुई भी विषय की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है, जो आगे की शृङ्खला की एक कड़ी है!

साध्वीश्री मञ्जुला जी ने प्रश्न के माध्यम से चर्चा को आगे बढ़ाया। उनकी जिज्ञासा थी कि दर्शनशास्त्र, न्यायशास्त्र एवं तर्कशास्त्र में मौलिक अन्तर क्या है? विषय के स्पष्टीकरण के रूप में प्रो० जयन्तीप्रसाद जैन, प्राचार्य-ब्राह्मी विद्यापीठ तथा डॉ० एस. सी. जैन, शोधाधिकारी, जैन विश्व भारती ने समाधान प्रस्तुत किया कि इसे एक किले के दृष्टान्त से समझना उचित होगा। दर्शनशास्त्र वह मूल सिद्धान्त है, जिसे किले में सबसे अधिक सुरक्षा देनी है। न्याय शास्त्र रक्षा के लिये सुगठित साधन है और तर्क शास्त्र को शस्त्रादि के रूप में ग्रहण करना चाहिये। पं० रामकुमार जी शास्त्री ने शब्द व्युत्पत्तिपरक दृष्टि से अपने विचार प्रकट किये। प्रमाण की चर्चा के प्रसंग में प्रो० जयन्ती प्रसाद जैन ने 'प्रमेयकमलमार्तण्ड' के आधार पर प्रमाण शब्द का अर्थ प्रस्तुत किया। आगे उन्होंने बतलाया कि भारतीय प्रज्ञा श्रद्धा एवं भक्ति को मुख्य आधार मानकर चलती है, जबकि पाश्चात्य दर्शन तर्क की कर्कशता का सहारा लेता है। भारत में हृदय प्रधान है एवं यूरोप में बुद्धि।

स्वतन्त्रता दिवस पर आचार्यश्री का सन्देश

"दिनांक १८-५-८० को आचार्य तुलसी ने अपना महत्त्वपूर्ण चिन्तन निम्न भांति प्रस्तुत किया :—

हिन्दुस्तान आज स्वतंत्र है। स्वतंत्रता का चौथा दशक चल रहा है। आर्थिक विकास हुआ है; औद्योगिक विकास हुआ है। नव निर्माण भी तेजी के साथ हो रहा है। आज भी आर्थिक समस्याएं जटिल है, गरीबी बहुत है, उसे मिटाने का प्रयत्न किया जा रहा है फिर भी उसके सामने एक प्रश्नचिह्न है। क्या आर्थिक गरीबी ही समस्या है? क्या उसका समाधान होने से सब कुछ सुलझ जाता है? हमारा ध्यान भावनात्मक गरीबी की ओर क्यों नहीं जाता? क्या आज का हिन्दुस्तान भावनात्मक दृष्टि से समृद्ध है? शिक्षा और तकनीकी का इतना विकास हो जाने पर भी साम्प्रदायिकता और जातीयता का

विष धुल नहीं पाया। साम्प्रदायिक हिंसा बार-बार भड़क उठती है। हरिजनों के प्रति कितने क्रूर व्यवहार होते हैं। ऐसा लगता है हिंसा बढ़ती जा रही है। इस समस्या में उलझा हुआ राष्ट्र आर्थिक समस्या को भी कैसे सुलझा पाएगा?

इन स्थितियों में विदेशी शक्तियों को हस्तक्षेप करने का मौका मिल जाता है और असामाजिक तत्त्व आतंक फैलाने में भी समर्थ हो जाते हैं। इन सारी समस्याओं से निपटने के लिए आज भावनात्मक एकता पर बल देना बहुत जरूरी है। मनुष्य जाति एक है—इस घोष को फिर शक्तिशाली करना जरूरी है। मुझे लगता है कि भावनात्मक एकता वर्तमान समस्याओं का सबसे बड़ा समाधान है। शिक्षा-संस्थान और धर्म सम्प्रदाय इस सचाई को जन-जन तक पहुंचाएं, तो विश्वास करना चाहिए कि राष्ट्र की शक्ति बढ़ेगी, हिंसा, भय और आतंक का स्वर क्षीण होगा। इस कार्य के लिए अणुव्रत आन्दोलन का योग समर्पित है।

अणुव्रत का घोष है **"संयमः खलु जीवनम्"**। आज सभी वर्गों को संयम बरतने की जरूरत है, भले ही वह विरोधी दल हो या सत्तारूढ़ दल हो, कोई सामाजिक संस्थान हो अथवा धार्मिक संस्थान हो। संचार, प्रचार और प्रसार के जितने माध्यम हैं, उनमें भी संयम रखने की अपेक्षा है। आज के प्रचार साधन इतने शक्तिशाली हैं कि एक स्थान की घटना कुछ क्षणों में सब स्थानों में पहुंच जाती हैं, उत्तेजना फैल जाती है और भयंकर प्रतिक्रिया होती है। पुराने जमाने में कहीं कोई घटना होती थी, उसका पड़ौसी गाँव को भी पूरा पता नहीं चलता था। उससे कुछ कठिनाइयां बढ़ती, तो सुविधाएं भी कम नहीं थीं। आग में यदि ईंधन नहीं मिलता, तो वह स्वयं बुझ जाती है। वर्तमान में आग को पेट्रोल मिल जाता है, इसलिए उसे भड़कने में देर नहीं लगती।

प्रलयंकारी अस्त्रों का भय हर राष्ट्र के नागरिक के मन में व्याप्त है। उसकी चिनगारियाँ कब उछलेंगी, कोई पता नहीं, किन्तु साम्प्रदायिकता और जातीयता की आग की चिनगारियाँ मनुष्य को झुलसाती रहती हैं। धर्म के नाम पर मनुष्य पागल जैसा हो जाता है और वह मानवीय एकता, जो धर्म की मूलभूत सचाई है, को भुला देता है। इस समस्या से निपटने के लिए छोटे प्रयत्न अब कारगर नहीं हो सकते, अब बड़े प्रयत्नों की जरूरत है। सब धर्मों का एक मंच और सब राजनैतिक दलों का एक राष्ट्रीय मंच बने। इस समस्या से निपटने के लिए सबकी शक्ति एक साथ लगे, तो मुझे आशा है कि हम आने वाली हिंसा की काली रात को उजले प्रकाश में बदल सकेंगे।

"मानव एकता" सम्मेलनका भव्य समारोह

"आज हम विरोधाभास का अजीब जीवन जी रहे हैं। अछूत कही जाने वाली जातियां स्वयं हीन भावना से ग्रस्त हैं। आज आवश्यकता है कि जीवन में विरोधाभास न रहे और हरिजन हीन भावना से मुक्त हों। आदमी को स्वयं के पुरुषार्थ से उठना है, अपनी शक्ति को जगाना है। कुसंस्कार, अज्ञान व वासनाओं को मिटाकर ही ऊपर उठा जा सकता है।" ये शब्द हैं युवाचार्यश्री महाप्रज्ञ के, जो उन्होंने २४ अगस्त को जैन विश्व भारती स्थित "सुधर्मा सभा" में राजस्थान हरिजन सेवक संघ के तत्त्वावधान में

तथा अणुव्रत अनुशास्ता आचार्यश्री तुलसी के सान्निध्य में आयोजित "मानव एकता सम्मेलन" में उपस्थित हजारों नागरिकों तथा दूर-दूर से आये हरिजन भाई-बहिनों के भव्य समारोह में प्रवचन करते हुए कहे।

आचार्यश्री ने कहा कि मनुष्य स्वयं पुरुषार्थी बने। जब तक वह स्वयं उठने का प्रयत्न नहीं करेगा दूसरा, कोई उन्हें नहीं उठा सकेगा। इस सम्मेलन को आशीर्वचन देते हुए आचार्यश्री तुलसी ने शुभ प्रवृत्तियों में केंकड़ावृत्ति की निंदा की तथा मनुष्य मात्र को संस्कारवान् तथा सुनागरिक बनाने की प्रेरणा की। राजस्थान विधानसभा के सदस्य श्री रामधन (लाडनूं) ने आध्यात्मिक वातावरण में हो रहे सम्मेलन के प्रति प्रसन्नता प्रगट करते हुए कहा कि—यह वह पुण्य धरा है जहाँ आचार्य तुलसी जैसे देश के महान् रत्न ने जन्म लिया है।"

राजस्थान के भू०पू० मंत्री व समाजसेवी श्री भोगीलाल पण्ड्या ने भी सम्मेलन मे मुख्य अतिथि के रूप में भाग लिया। बीकानेर के सुमधुर गायक श्री मुकेश राजस्थानी का वक्तव्य व भजन बड़ा प्रभावपूर्ण रहा। स्वागतमंत्री श्री रूपचन्द पंवार ने सबका स्वागत किया।

"प्रेक्षा ध्यान शिविर" संपन्न

"विश्व की परम सत्ता इस शरीर में ही है, यह शरीर मात्र हाड़-मांस का पुतला ही नहीं, चैतन्य का पवित्र मन्दिर है। उस विराट् सत्ता का दर्शन शरीर के माध्यम से ही होता है। जिसे शरीर को देखना नहीं आता, वह चैतन्य को कैसे पकड़ेगा? चैतन्य की यात्रा के लिए प्रेक्षा का आलम्बन लिया जाता है, उससे सत्य का साक्षात्कार हो जाता है।" पर्युषण पर्व पर ८ सितम्बर ८० से १३ सितम्बर ८० तक आयोजित प्रेक्षा-ध्यान शिविर समापन समारोह में युवाचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने उपर्युक्त उद्गार प्रकट किये।

उन्होंने आगे कहा—"साधना का ध्येय आत्मानुशासन है। वह व्यवहार में शरीर और मनोनुशासन के रूप में उतरता है, उसे बाहर के अनुशासन की इतनी अपेक्षा नहीं रहती। अनुशासन केवल शब्दों से नहीं होता, वह आचरण से व्यवहार में आता है। जो आचरण को समझ लेता है, वह अध्यात्म को समझ लेता है, प्रेक्षा साधना अध्यात्म साधना का मार्ग है जिसमें जैन, अजैन, हिन्दू, पारसी, आर्यसमाजी सभी समान रूप से सम्मिलित होते हैं।"

युगप्रधान आचार्यश्री तुलसी ने इस अवसर पर अपने आशीर्वचन में कहा—"साधना का मार्ग उसे ही उपलब्ध होता है जिसके चित्त में उसे प्राप्त करने की प्यास, बेचैनी और तड़प होती है। संकल्प के बिना कोई भी किसी महान् उद्देश्य को प्राप्त नहीं कर सका, प्रेक्षा-ध्यान संकल्प को जगाने का मार्ग है। जो साधक प्रेक्षा साधना में उतरता है, वह शरीर, मन और अध्यात्म से उपकृत होता है। प्रेक्षा साधना शिविरों ने स्वल्प काल में एक आध्यात्मिक वातावरण निर्मित किया है। अब अपेक्षा है कि इसके लिए कुछ समर्पित व्यक्तित्व जुड़े, जिससे इसका राष्ट्रव्यापी प्रसार हो सके"

तुलसी अध्यात्म नीडम् द्वारा प्रज्ञा-प्रदीप भवन में आयोजित यह शिविर सबसे विशाल था, जिसमें विभिन्न प्रान्तों के लगभग दो सौ शिविरार्थियों ने भाग लिया। शिविरार्थियों ने अपने अनुभव भरे रोचक संस्मरण प्रस्तुत किये। नीडम् के चेयरमेन श्री जेठाभाई एस० जवेरी ने धन्यवाद ज्ञापित किया।

जैन विश्व भारती का नवीन प्रकाशन

आगम शब्दकोश

(अंगसुत्ताणि शब्द सूची)

खण्ड १, भाग १, : पृष्ठ संख्या १४+८२४

वाचना-प्रमुख — आचार्य तुलसी

सम्पादक — युवाचार्य महाप्रज्ञ

प्रस्तुत ग्रन्थ आगमकोश के प्रथम खण्ड का प्रथम भाग है। इसमें अंगसूत्रों के शब्द और उनके प्रमाण-स्थल संगृहीत हैं। सन् १९७४ में जैन विश्व भारती द्वारा 'अंगसुत्ताणि' के तीन भाग प्रकाशित हुये थे। उनमें अंगों का संशोधित पाठ है। उसी को आधार मानकर यह शब्दकोश तैयार किया गया है।

प्रकाशक

जैन विश्व भारती

लाडनूं (राजस्थान) ३४१३०६

जैन विश्व भारती द्वारा संचालित

जैन-विद्या-परीक्षा

अन्य नवीन प्रकाशन

१. जैन परम्परा का इतिहास	—युवाचार्यश्री महाप्रज्ञ	४.००
२. जैन दर्शन में तत्त्वमीमांसा	,, ,,	५.००
३. जैन विद्या, भाग १	—सम्पा० मुनि सुदर्शन	०.७५
४. जैन विद्या, भाग २	,, ,, ,,	१.२०
५. जैन विद्या, भाग ३	,, ,, ,,	१.८०
६. जैन विद्या, भाग ४	,, ,, ,,	३.००

उपर्युक्त पुस्तकें जैन-विद्या परीक्षा के पाठ्यक्रम को ध्यान में रखकर लिखी गई हैं, अतः जैन-विद्या परीक्षा में बैठने वाले छात्रों को उक्त पुस्तकों से लाभ उठाना चाहिए।

प्रकाशक

जैन विश्व भारती, लाडनूं-३४१३०६

Postal Registration No. RJ 4505
Registered with the Registrar of Newspapers for India;
R. N. 28340/75. TULASĪ PRAJÑĀ, October, 1980

जैन विश्व भारती, लाडनूं

महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

वाचना प्रमुख : **आचार्यश्री तुलसी**, विवेचक तथा सम्पादक : **युवाचार्यश्री महाप्रज्ञ**

आगम ग्रंथ :

१. अंगसुत्ताणि १ (आयारो, सूयगडो, ठाणं, समवाओ)	८५.००
२. अंगसुत्ताणि २ (भगवई : विआहपण्णत्ती)	९०.००
३. अंगसुत्ताणि ३ (णायाधम्मकहाओ, उवासगदसाओ, अंतगडदसाओ, अणुत्तरोववाइयदसाओ, पण्हावागरणाइ, विवागसूयं)	८०.००
[उपर्युक्त तीनों ग्रन्थ संशोधित मूलपाठ, पाठान्तर, पाठान्तर-विमर्श, "जाव" पूर्ति और उसके आधारस्थल, विषयसूची, सम्पादकीय तथा भूमिका से युक्त, प्रत्येक भाग ११००-१२०० पृष्ठ]	
४. दसवेआलियं (द्वितीय संस्करण) पृष्ठ ६१२ साइज डिमाई १/४	८५.००
५. ठाणं पृष्ठ १२०० ,, ,,	१२५.००
६. आयारो--मूलपाठ, हिन्दी अनुवाद तथा टिप्पण	३०.००
७. दशवैकालिक (गुटका) मूलपाठ	१.००
८. उत्तराध्ययन (गुटका) मूलपाठ	३.५०
९. दशवैकालिक तथा उत्तराध्ययन– मात्र हिन्दी अनुवाद	१५.००
१०. दशवैकालिक, उत्तराध्ययन (हिन्दी पद्यानुवाद)	१०.००
११. आगम शब्दकोश (अंगसुत्ताणि शब्दसूची) खण्ड १, भाग १	—

आगमेतर ग्रंथ

१२. श्रमण महावीर—युवाचार्यश्री महाप्रज्ञ	१६.००
१३. भगवान् महावीर—आचार्यश्री तुलसी	५.००
१४. भरतबाहुबलि महाकाव्यम्—अनु० मुनिश्री दुलहराज	३०.००
१५. सत्य की खोज : अनेकांत के आलोक में—युवाचार्यश्री महाप्रज्ञ	५.००
१६. थ्योरी ऑफ एटम इन जैन फिलोसफी—जे० एस० जवेरी	८.००
१७. श्रेणिक बिम्बिसार एण्ड कूणिक अजातशत्रु	७.००
१८. प्रतिदिन का एक विचार (गुटका)– श्रीचन्द रामपुरिया	४.००
१९. जैन-धर्म के प्रभावक आचार्य—साध्वी संघमित्रा	२५.००

—: प्राप्ति-स्थान :—

जैन विश्व भारती, लाडनूं (राजस्थान)

Jain Vishva Bharati, Ladnun (Raj.) 341306

प्रकाशक-मुद्रक : रामस्वरूप गर्ग, कार्यालय-सचिव, जैन विश्व भारती, लाडनूं श्याम प्रेस लाडनूं के लिए एस. नारायण एण्ड संस, 71/7/18 पहाड़ी धीरज, दिल्ली में मुद्रित